नीरोग होने का सच्चा उपाय

सस्ता साहित्य मण्डल प्रकाशन

नीरोग होने का सच्चा उपाय

सुप्रसिद्ध प्राकृतिक चिकित्सक डा० आर० टी० ट्राल, एम. डी.
के लोकोपयोगी अभिभाषण 'दी ट्रू हीलिंग आर्ट' का
हिन्दी रूपान्तर

रूपान्तरकार

वासुदेवशरण अग्रवाल

१९७८

सस्ता साहित्य मण्डल प्रकाशन

प्रकाशक
यशपाल जैन
मंत्री, सस्ता साहित्य मंडल,
नई दिल्ली

चौथी बार : १९७८

मूल्य : २.५०
संशोधित मूल्य....... 4.50

मुद्रक
अग्रवाल प्रिंटर्स,
दिल्ली-

प्रकाशकीय

'मंडल' से काफ़ी स्वास्थ्योपयोगी साहित्य प्रकाशित हुआ है। हमारा उद्देश्य यह है कि पाठक स्वस्थ रहनेका सही उपाय जानें और अपनी गलतीसे कभी बीमार हो जायं तो डाक्टरों और दवाके चक्करमें न पड़कर सहजमें स्वस्थ हो जायं।

आज डाक्टरों और दवाओंका जोर इतना बढ़ गया है कि जरा-सा रोग होनेपर रोगी उनके पीछे दौड़ता है और पैसा तथा स्वास्थ्य दोनोंकी बरबादी करता है।

इस पुस्तकमें बताया गया है कि बीमार दवाओंसे अपनेको कदापि नीरोग नहीं कर सकता। वह प्रकृतिकी सहायतासे ही अपनी जीवनी-शक्तिको बढ़ाकर रोगमुक्त हो सकता है। रोग आखिर शरीरके विषों-का, जिन्हें विजातीय द्रव्य कहते हैं, निष्कासन ही तो है। इस कार्यमें हम प्रकृतिकी जितनी अधिक मदद करेंगे, उतना ही हमारा शरीर शुद्ध अर्थात् नीरोग होगा।

इस पुस्तकको पढ़कर पाठक स्वास्थ्य-सम्बन्धी बुनियादी बातोंसे परिचित हो सकते हैं।

—मंत्री

निवेदन

डा० ट्रालकी अंग्रेजी पुस्तक 'दी ट्रू हीलिंग आर्ट' के साथ मेरे परि-चयकी एक छोटी कहानी है। मैं सन् १९६० के अगस्त मासमें भयंकर डायबिटीज रोगसे पीड़ित हुआ। वैसे तो यकृतकी गड़बड़ सालभर पहले-से चल रही थी, पर मैंने उस ओर विशेष ध्यान न दिया था, या लाचारी-से उस विषयमें कुछ न कर सका था। कष्ट पाता, उपचार करता, पर रोगपर मेरा कोई वश न चलता। जब हालत अंतको पहुंच गई और अवस्था इतनी बिगड़ी कि रक्षा-बंधनके दिन अपनी बहनके लाये हुए दो अंगूर खाना भी मेरे लिए दूभर हो गया तो उसके तीसरे दिन मैंने चारपाई पकड़ ली। उस असहाय अवस्थामें डाक्टर मुझे उठाकर अस्पताल ले गये। वहां ९ अगस्तसे वही इलाज शुरू हुआ, जो डाक्टरी चिकित्सामें सारी दुनियामें इस समय चालू है, अर्थात् दोनों समय इन्सू-लीनके इंजेक्शन लगने लगे। खून और पेशावमें कितनी शक्कर आती है, इसकी जांच की जाने लगी। शुरूमें लाभ मालूम हुआ, भूख भी बढ़ी, मैंने समझा कि यकृत अपना ठीक काम करने लगा। पचीस दिन अपने विश्वविद्यालयके अस्पतालकी रोगी-शय्यापर रहकर मैं घर लौट आया। डाक्टरोंने भी राय दी कि वहीं घरपर ही इलाज जारी रहेगा। लेकिन फिर वही ढाकके तीन पात। जो लाभ हुआ था वह धीरे-धीरे मिट गया। पर इंजेक्शन तो चलते ही रहे। कमजोरी भी बढ़ती गई। दो महीने काशीमें और इलाज चलता रहा। इन्सूलीनकी मात्रा काफी दी गई, पर जब शक्करकी मात्रा न घटी तो डाक्टरोंने उत्साह न दिखाया और मुझे लखनऊ जानेकी सलाह दी। वहां भी डाक्टरोंने लगभग वैसा ही इलाज बताया। दो महीने तक और मैं इन्सूलीनकी सुइयां बराबर लेता रहा। सारे शरीरमें, करीब-करीब रात-दिन, बहुत जलन और खुजली

होती थी, जो खाना खानेके बाद तो सही नहीं जाती थी। मालूम होता था कि किसीने अंगारेके तख्तोंपर लिटा दिया है। इसी अवस्थामें १६ दिसम्बरको मैं फिर बनारस लौट आया।

वहां एक दिन प्राकृतिक चिकित्सा केन्द्र, जसीडीहके संचालक श्री-महावीरप्रसादजी पोद्दारकी (जिन्हें केन्द्रमें सब ताऊजी कहते हैं) लिखी हुई 'प्राकृतिक चिकित्साके चमत्कार' नामक पुस्तक मेरे हाथ लगी। एक बैठकमें ही उसे पढ़ गया। मुझे चलनेके लिए एक नया रास्ता मिला। डाक्टरी दवाओंपर मेरी पहलेसे ही आस्था न थी और रोगपर इन्सूलीनका कोई असर हो भी नहीं रहा था। बनारस और लखनऊके कुछ डाक्टर संशयमें भी पड़े थे। मैंने जसीडीहको पत्र लिखा। तुरन्त वहांसे जवाब आया कि आ जानेपर इलाज करेंगे।

मैं १६ जनवरी १९६१ को प्राकृतिक चिकित्सा केन्द्र, जसीडीह पहुंच गया। यहां प्राकृतिक चिकित्साके विषयमें ४० वर्षोंका अनुभव रखनेवाले श्रीमहावीरप्रसादजी पोद्दार या ताऊजीसे परिचय हुआ। पहले ही दिनसे मैं उनके और वह मेरे निकट आ गये। हम दोनोंने एक-दूसरे को पहचाना और मित्र बन गये। मैं ढाई महीने यहां रहा। मेरा रोग जाता रहा। शरीरमें जो असह्य दाह थी, वह मिट गई। चार मील टह-लने लगा। भूख लगने लगी। चिकित्साका जो क्रम चला, उसकी कहानी अलगसे लिखने की इच्छा है। यहां यह कहूंगा कि बातचीतके सिलसिले-में प्राकृतिक चिकित्साकी बात करते तो ताऊजी डा० ट्रालका नाम लिया करते थे, जिन्होंने सौ साल पहले अमरीकामें प्राकृतिक चिकित्साके पक्ष-में अपनी आवाज उठाई थी। वे स्वयं एम. डी. थे, पर उन्हें प्राकृतिक चिकित्साके विषयमें ऋषि-दृष्टि प्राप्त हुई। अपनी आत्मा और मन की समस्त शक्ति उन्होंने इस चिकित्साके प्रचारमें लगा दी। वह अपनी बात उसी उत्साहसे कहते थे, जिस जोरसे नये सत्यके प्रचारक कहा करते हैं। उन्होंने वाशिंगटनके स्मिथसोनियन इन्स्टिट्यूटके सामने एक गंभीर

और विचारोत्तेजक भाषण दिया था। उस भाषणकी एक प्रति ताऊजी-ने मुझे पढ़ने को दी। भाषण इतना रोचक था कि एक ही दिनमें मैंने उसे पढ़ डाला और मैं डा० ट्रालकी बातोंसे बहुत ही प्रभावित हुआ। प्राकृतिक चिकित्साके पक्षमें उनकी जोरदार हिमायत मुझे बिलकुल सच जान पड़ी। मैंने ताऊजीसे उसकी प्रशंसा की तो उन्होंने पुस्तकका अनुवाद करनेकी सलाह दी। उसीके फलस्वरूप मैं आज, यहांसे चलनेसे पूर्व, इस अनुवादको समाप्त कर सका हूं, इसकी मुझे प्रसन्नता है। इस कार्यमें श्रीगुरुप्रसादजीने लेखकके रूपमें मेरी सहायता की, उसके लिए मैं उनका कृतज्ञ हूं।

प्राकृतिक चिकित्सा केन्द्र,
जमीडीह,
३० मार्च, १९६१

—वासुदेवशरण अग्रवाल

लेखक

लेखक-परिचय

डा० आर० टी० ट्राल उन्नीसवीं शतीमें अमरीकाके एक महान् मौलिक प्राकृतिक चिकित्सक हुए हैं। यह उन्हींके एक व्याख्यानका, जो उन्होंने वाशिंगटनके स्मिथसोनियन इन्स्टिट्यूटके मंचसे अनेक विद्वानों, विचारकों और डाक्टरोंके सामने दिया था, अनुवाद है। इसमें उन्होंने दवा द्वारा आरोग्य प्राप्तिके भ्रमका जोरदार खंडन करते हुए प्राकृतिक चिकित्साका समर्थन किया था।

डा० ट्रालका जन्म ५ अगस्त १८१२को वेरनेन (Vernon) टालेंड काउंटीमें हुआ था। वहांसे उनके पिता न्यूयार्कमें आ बसे थे। ट्रॉलकी प्राथमिक शिक्षा जिला स्कूल तक हो पाई। लड़कपनमें ही उनका स्वास्थ्य बिगड़ गया। इसके लिए डाक्टरी इलाज कराकर उन्होंने बड़ा नुकसान उठाया। अपनी बीमारीके निदान और डाक्टरी दवाओंसे संतोष न होनेपर उन्होंने स्वयं अनुसंधान करनेकी ठानी और अपने लिए रोग-निवृत्तिका पेशा पसंद किया। वह बड़ी तन्मयतासे गांवके डाक्टरसे इस विषयका अध्ययन करने लगे। तीन वर्षों तक वह अध्ययनमें जुटे रहे। उनका लक्ष्य पैसा कमाना नहीं था, प्रधान उद्देश्य था स्वयंको स्वस्थ करना और सच्चाईकी खोज करना। अध्ययनकालमें ही उनके मनमें यह बात जम गई थी कि डाक्टरी पेशेके बहुतेरे सिद्धांत भानमतीके पिटारे के समान हैं। इसके सिवा, भारी-भरकम पोथोंमें कही गई, चिकित्सा-विधियां गलत ही नहीं, बहुत खतरनाक भी हैं। एम०डी०की डिग्री प्राप्त करते-करते डाक्टरी चिकित्सा-विधिके प्रति उनका विश्वास बिलकुल उठ गया था। उन्हें यह स्पष्ट हो गया था कि दवाओं द्वारा इलाजका तरीका बिलकुल गलत है— प्रकृति और समझदारी दोनोंके विरुद्ध। वही पदार्थ और उपाय आरोग्यप्रद हो सकते हैं, जिनका हमारी जीवनी-शक्तिसे सीधा संबंध है।

जैसे, हवा, पानी, रोशनी, आहार, तापमान, व्यायाम, विश्राम, निद्रा, मानसिक भावनाएं, विद्युत् आदि ।

१८४४ में उन्होंने न्यूयार्कमें अपने ढंगका पहला जलचिकित्सा-केन्द्र खोला । उन्हें ब्राडवे अस्पतालसे ऐसे रोगी मिले, जिन्हें डाक्टरी चिकित्साने जवाब दे दिया था । वे सभी उनकी चिकित्सामें चंगे हो गये । बादको तो डा० ट्रॉलने रत्ती भर दवाका इस्तेमाल न किया ।

१८५२में उन्होंने न्यूयार्कमें जलचिकित्सा और शरीर-विज्ञानका एक कालेज खोला । सन् १८५७ में वहांकी विधान-सभाने इसे न्यूयार्क हाइड्रिजयोथेराप्यूटिक कालेजके नामसे मान्यता दी । इसे एम० डी० की डिग्री देनेका अधिकार दिया गया । १८८७ में डा० ट्रालकी मृत्यु हुई ।

वह कलमके धनीथे । शैली उनकीपैनी, परसंक्षिप्त थी । उससे उनका अनुभव आर पांडित्य टपकता था । उनकी बड़ी पुस्तक 'जलचिकित्साका विश्वकोष' (Hydropathic Encyclopaedia) है । इसमें जल-चिकित्साके सिद्धान्त और उपायोंका विशद वर्णन है ।

उनकी दूसरी पुस्तकें हैं—फेमिली जिमनेसियम (Family Gymnasium),हाइड्रोपैथिककुकबुक(HydropathicCook-Book) पॉपुलर फिज़ियोलोजी(Popular Physiologo),डाइजेशन एंड डिस्पेप्सिया (Digestion & Dyspepsia), मदर्स हाइजीनिक हैंड-बुक (MothersHygienic Hand Book),वाटर क्योर फारदी मिलियन्स (Water Cure for the Million) ।

भूमिका

एक बार अमरीकाके पश्चिमी भागमें व्याख्यानका दौरा समाप्त करके घर लौटते समय मेरे मनमें आया कि अपने देशकी राजधानी वाशिंगटनमें 'नीरोग होनेका सच्चा उपाय' के संबंधमें एक व्याख्यान द्वारा वहांके प्रभावशाली लोगोंको इस ओर आकर्षित करूं। इसके लिए मैंने 'वाटर क्योर जर्नल' (Water Cure Journal) में एक विज्ञप्ति निकाली कि युद्धके चिकित्सा-शिविर और अस्पतालोंमें हमारे जो सिपाही (उस समय अमरीकामें गृह-युद्ध चल रहा था) टायफायड, न्यूमोनिया, चेचक, पेचिश आदिसे बड़ी संख्यामें बिना मौत मर रहे हैं, उन्हें प्राकृतिक चिकित्सा द्वारा सहजमें बचाया जा सकता है। फौजमें भी दवा न देनेवाले डाक्टर हैं और उनके रोगी कम संख्यामें मरते हैं। मेरे अपने स्कूलमें पढ़ी हुई परिचारिकाओंसे मेरा पत्र-व्यवहार हुआ है। वे बिना दवाओंके रोगियोंको अच्छा कर रही हैं। इस राष्ट्रीय महत्त्वके प्रश्नको देशके मान्य अधिकारियोंके सामने रखनेके ख्यालसे मैंने प्रेसिडेंट अब्राहम लिंकन और युद्ध, नौ-सेना आदिके मंत्रियोंको अनेक पत्र लिखे। पर कहींसे कोई उत्तर न आया। मैंने अपने मित्र डा० कौंडिक्टको वाशिंगटनमें पत्र लिखकर वहां व्याख्यानके लिए एक स्थान (क्रिश्चियन एसोसियेशन हाल) ठीक कराया। पर वहां जानेपर कुछ मित्रोंने मुझे सुझाया कि वाशिंगटनमें अपनी बातका असर डालना हो तो भाषण 'स्मिथसोनियन इन्स्टिट्यूट' में होना चाहिए। तब उस संस्थाके एक अधिकारी प्रो० हेनरीसे मिलकर मैंने उन्हें बताया कि मैं दवाओंके खंडन और प्राकृतिक उपचारके पक्षमें बोलना चाहता हूं। प्रो० हेनरीको मेरी नीयतमें तो शक न था, पर वह इस नये विषयसे चौंक गये। उन्हें लगा कि उस भारी-भरकम विद्यामंदिरके घिसे-पिटे चौखटेमें मेरे विषयसे कुछ खटपट पैदा हो सकती है। उन्होंने मेरा प्रस्ताव अस्वीकार

कर दिया। किसी तरह न पसीजे। घर लौटकर मैंने उन्हें एक करारा पत्र लिखा। फिरभी कोई असर न हुआ। फिरभी मैंने हिम्मत न हारी। वहींकी एक संस्था वाशिंगटन लेक्चर-एसोसियेशनके द्वारा, जिसके सदस्य अधिक उदार थे, मैंने प्रयत्न किया। उसके सभापति पादरी जॉन पिपरमौंट तथा दूसरे मित्रोंने मेरी सहायता की और मेरी बातकी सचाई जानकर ऐसा ब्यौंत बना दिया कि मुझे स्मिथसोनियन इन्स्टिट्यूटमें भाषणकी अनुमति मिल गई। मेरे सहायकोंकी पूरी विजय हुई।

कभी इस प्रकारके गणमान्य श्रोताओंसे मेरा पाला न पड़ा था। सभामें कांग्रेसके सदस्य, फौजी अफसर, विभिन्न पद्धतियोंके डाक्टर, सैनिक चिकित्सक और अनेक वैज्ञानिक, साहित्यिक संस्थाओंके सभासद तथा वाशिंगटनके अनेक स्वतंत्र विचारक आये थे। ऐसे श्रोताओंको पाकर मैं बहुत खुश था। मुझे अपनी बातके सुनी जानेका विश्वास था और यह भी कि यदि उसमें जान होगी तो लोग ऊबकर नहीं भागेंगे।

वाशिंगटनमें भाषण प्रायः घंटे भर चला करते थे। सबसे लंबा भाषण वहां डेढ़ घंटे, तकका हुआ था। पर मैं तो रातको ८ से १०॥ बजे तक, पूरे ढाई घंटे, बोलता रहा और लोग शांत भावसे बैठे तन्मयतापूर्वक सुनते रहे।

—आर० टी० ट्राल

विषय-सूची

नीरोग होनेका सच्चा उपाय

: १ :

चिकित्सा-विज्ञान

श्रीमान् सभापतिजी,

आपके द्वारा दिये गए मेरे परिचयके लिए मैं आपका बहुत आभारी हूं। आपने यह ठीक ही कहा है कि मेरे मतकी जिम्मेदारी मेरी ही है। इसके कारण, मैं अपनी बात स्वतंत्रतासे कह सकूंगा और अपने मतके कारण दूसरे किसीको उलझनमें डालनेका दोषी न बनूंगा।

वाशिंगटन लेक्चर एसोसियेशनके सदस्योंका भी मैं कृतज्ञ हूं कि जिन्होंने इस स्थानमें स्वतंत्र विचार और एक बिलकुल नये विषयपर भाषणका द्वार मुक्त करके मुझ जैसे अनचाहे वक्ताको इस मंच तक पहुंचनेका अवसर दिया। मैं लोगोंके भ्रमके खिलाफ इतने लंबे समयसे जिहाद कर रहा हूं कि मैं अपने-आपको लोकप्रिय वक्ता नहीं मानता। अपयशका कोई डर न रखनेके कारण मैं बिलकुल आज़ादीसे बोल सकता हूं। एक प्राकृतिक चिकित्सकके नाते मुझे यह उचित मालूम होता है कि सत्यको प्रकट करने तथा मानवके हितकी दृष्टिसे ठकुरसुहाती बातोंको छोड़ कर दूसरी पद्धतियोंकी वास्तविक बुराइयोंको जनताके सामने साफ शब्दोंमें कहा जाय।

रोग-निवृत्तिके सम्बंधमें जो सिद्धांत प्रचलित हैं और जो

डाक्टरी स्कूल, कालेजों एवं पुस्तकोंमें पढ़ाये जाते हैं, जिनपर पेशेवर चिकित्सक चलते हैं, जिन्हें चिकित्सा-विज्ञान कहा जाता है और जो आज लोगोंके उपचारके लिए बरते जाते हैं, वे सब वैज्ञानिक दृष्टि से गलत, प्रकृति-विरोधी और शारीरिक जीवनी-शक्तिके नियमके प्रायः विपरीत हैं। यही कारण है कि चिकित्सा-विज्ञान अन्य विज्ञानोंकी भांति उन्नत नहीं हो पाया—मनुष्यके नीरोग होनेके उपायोंमें उतनी सफलता नहीं मिल सकी जितनी दूसरे विज्ञानोंमें। प्राप्त सफलता मानवजातिकी बुद्धिमत्ताकी प्रगतिके अनुरूप भी नहीं है। हम देखते हैं कि चिकित्साके मूल सिद्धांत रोज बदलते रहते हैं। उसके आचार्योंमें हमेशा मतभेद बना रहता है, उसकी मान्यताओंके बारेमें झगड़ा चलता रहता है। उसके मूलभूत नियम और प्राथमिक आधार या तो समझे नहीं जाते या उपेक्षित रहते हैं। बीमारोंके उपचार और स्वास्थ्य-रक्षाके मामलेमें चिकित्सा-विज्ञान बिलकुल अनिश्चित ही नहीं, बल्कि खतरनाक और विनाशकारी है। संसारको इससे लाभ कम, हानि अधिक होती है।

: २ :

चिकित्सा-शास्त्रके सच्चे आधार

इसके विपरीत, मेरा दावा है कि मैंने चिकित्सा-शास्त्रके सच्चे आधार ढूंढ़ लिये हैं। अपने इस आविष्कार द्वारा मैंने इस विज्ञान-की अब तककी सारी रहस्यपूर्ण समस्याओंको सुलझा दिया है। इनमें वे समस्याएं भी सम्मिलित हैं, जो चिकित्सकोंको सदा परेशान करती रही हैं और जिन्हें बड़े-बड़े विद्वान लेखक और आचार्य अबतक मनुष्यकी बुद्धिसे बाहर समझते रहे हैं। मिसाल-के लिए, हम रोगीकी वास्तविकता और दवाओंके रोगोंको प्रभावित करनेके तरीकेको लें। इस नई जानकारीके आधारपर एक ऐसे सिद्धांतकी घोषणा की जा सकती है और इलाजका एक ऐसा तरीका बतलाया जा सकता है, जो पूर्ण वैज्ञानिक है, प्रकृतिके सारे नियमोंसे सुसंगत है, शरीर संस्थानकी रचना और उसके कार्योंके अनुकूल है तथा रोगोंके उपचार या निरोधमें निश्चित रूपसे सफल है।

मैं निम्नलिखित युक्तियोंके बलपर इलाजके चालू तरीकों की असत्यता के सम्बंधमें कहना चाहता हूं :

१. उन तथ्योंके द्वारा जिन्हें सब मानते हैं।
२. उनके अनुयायी चिकित्सकोंकी निजी साक्षी द्वारा
३. उनके विरोधियोंकी साक्षी द्वारा
४. प्रकृतिके नियमों द्वारा
५. हेतु और तर्क द्वारा

६. इस विषयमें विज्ञानकी अबतककी प्राप्त जानकारी द्वारा।

आपको मेरी ये बातें बहुत क्रान्तिकारी और आक्रमणात्मक जान पड़ सकती हैं। पर मैं ये बातें जोशमें नहीं कह रहा हूं। मैं अपने प्रत्येक शब्दकी सच्चाई पर दृढ़ हूं और उसके पूरे अर्थको समझता हूं। अपने श्रोताओंसे भी मैं कहना चाहता हूं कि वे स्वयं उन्हें तौलकर देखें कि मेरा दावा कहां तक सही है। मैं सारे पेशेवर चिकित्सक समुदायको बड़े अदबसे खुली चुनौती देता हूं कि मेरी बातोंका जवाब दें। मुझे खुशी है कि मैं ऐसे श्रोताओंके सामने हूं और उस गौरवशाली विद्या-संस्थानमें खड़ा हूं जो ज्ञानका प्रकाश, न केवल एक देशमें, बल्कि मानव-जातिमें फैलानेके लिए संगठित हुआ है। मुझे मालूम है कि मैं बहुतही तीक्ष्ण और घने बौद्धिक वातावरणमें एक महान देशके चुने हुए प्रतिनिधियोंके सामने स्वास्थ्य-रक्षा और रोगोंकी चिकित्सा जैसी बड़ी सच्चाइयोंके बारेमें अपनी बात कह रहा हूं। इन दो विषयोंका राष्ट्रोंके उत्थान और पतन के साथ बड़ा सम्बंध है। राष्ट्रके जीवन और रक्षा एवं लोक-कल्याणके लिए मेरी रायमें बाइबिलके बाद इसी विषयका सबसे अधिक महत्त्व है। इस समय लड़ी जानेवाली बड़ी लड़ाई पर भी देशका भाग्य और उसकी उन्नति उतनी निर्भर नहीं करती, जितनी उन सिद्धांतोंपर, जिनके द्वारा मैंने इलाजके गलत तरीकोंके विरुद्ध, धावा बोल रखा है।

संसारमें सदा यह एक समस्या ही रही है कि नई सच्चाईको किस ढंगसे रखा जाय जिससे पुराणपंथी बिगड़ न जायं। लोगों-की राय या मतके विरुद्ध कहनेपर वे प्रायः उसे अपने पर हमला समझते हैं। बहुतेरे तो अपने दुराग्रहको ही सच्चाई मान बैठते हैं।

मुझसे पूछा जा सकता है कि डाक्टरोंको सीधे अपनी बात न कहकर लोगोंसे क्यों कहता हूं ? अथवा वाद-विवादका यह बखेड़ा मोल ही क्यों लेता हूं ? पहली बात, डाक्टर तो मेरी बात सुननेसे साफ इन्कार करते हैं। दूसरे, वाद-विवाद ही एक ऐसा तरीका है, जिससे सच्चाईके दोनों पक्ष और विषयके सब पहलू जनताके सामने लाये जा सकते हैं। एक ही व्यक्ति द्वारा दोनों पक्षोंका सही तौरसे सामने लाना मुश्किल भी है। संभवहै कि वह अपने विरोधी मतके साथ ठीक न्याय न कर पाये, जनता उसपर पक्षपात या अज्ञानका संदेह तो कर ही सकती है।

दवाओं द्वारा इलाज और प्राकृतिक उपायोंसे नीरोग करनेवाली पद्धतियोंके गुण-दोषों पर समर्थ डाक्टरोंसे बहस करनेकी मेरी बड़ी इच्छा रही है। बहुत बार मैंने इसके लिए उन्हें ललकारा भी है। इस चुनौतीको मैं सर्वसाधारणके सामने रखना चाहता हूं, जिससे सब जान जायं कि सत्य कहां है। यदि मेरी भूल हो तो मैं उसे सुधारना चाहूंगा। यदि मेरे विपक्षी सत्य पर हों तो उन्हें समर्थन मिलना चाहिए। यदि मेरा तरीका सच्चा है तो उनका गलत है, यदि उनका सच्चा है तो मेरा झूठा है। दोनोंमें सांप और नेवलेकी टक्कर है।

दवाओंसे इलाजका तरीका काठकी हांडीकी तरह सच्चाईकी आंच पर नहीं चढ़सकता। कसौटी पर कसे जानेपर उसके प्राण निकल जाते हैं। उसकी कुशल तोइसीमें है कि कोईउसे छेड़े नहीं। उसके हामी चाहते यही हैं कि उसे आरामसे जिंदगी बिताने दी जाय। पर मैं इलाजके जिस उपायकी बात करता हूं वह तो बिना छानबीनके पनप ही नहीं सकता। इसे जितना जांचें-परखें, उतना ही इसमें रस बढ़ता है। शायद ही कोई ऐसा मिले, जिसके

इस तरीकेकी अच्छी तरह जांच-पड़ताल कर लेने पर उसका इसमें पूरा विश्वास न जम गया हो ।

देवियो और सज्जनो ! आप पूछ सकते हैं कि मुझे इस वादविवादमें क्या मज़ा आता है ? और जिन्होंने अपना स्वास्थ्य खो दिया है, उनके सिवा इस पर कौन ध्यान देता है ? कब्रमें पैर लटकानेके पहले कौन उसकी कद्र करता है ? कृपया आप मुझसे कहें कि आप स्वास्थ्यकी क्या कीमत आंकते हैं और यह भी कि यदि आपके दिलसे रोगका भय जाता रहे तो आपको कितना लाभ होगा ? आप सोचें कि अपने कुटुम्बके लिए, समाजके लिए और अपने-आपके लिए जीवनका क्या मूल्य है ? और तब, मुझसे मेरे इस विषयके महत्त्वका लेखा पूछें ।

: ३ :

इलाजके दो तरीके

इलाजके केवल दो तरीके हैं—दवा-दारूका और प्राकृतिक। एकमें रोग दूर करनेके लिए विषको दवाओंकी भांति इस्तेमाल किया जाता है, दूसरेमें प्राकृतिक पदार्थों और शक्तियोंको रोग-निवारणके लिए ठीक उपायोंकी भांति काममें लाया जाता है। दवा-पद्धतिकी कई शाखाएं हैं, जैसे एलोपैथी, होमियोपैथी आदि, पर मूलतः वे सब एक हैं। उनमें भेद बहुत थोड़ा है, सबका प्राथमिक आधार एक है। सबकी तहमें एक ही बात पाई जाती है, अर्थात दूसरा रोग पैदा करके एक रोगको हटाना। असली बीमारीको दूर करनेके लिए दवा एक नई बीमारी पैदा कर देती है।[1]

दवाके जरिये इलाजका—फिर उसका कोई भी तरीका क्यों न हो—अर्थ है कि बीमारी दूर करनेके लिए वह चीज देना, जो भले-चंगे आदमीको देनेपर उसमें बीमारी पैदा कर दे। दवाओं-की सूचीमें बहुत-सी जड़ीबूटियां, रासायनिक पदार्थ, रंग आदि हैं, जिन्हें एक शब्दमें विष ही कहना चाहिए। चाहे वे पेड़-पौधों-से लिये जायं अथवा जानवरोंसे, या खानकी पैदावार हों और उन्हें हम चाहे दवा कहें या अत्तारी नुस्खे, हैं सब एक ही। उनकी शक्ल अम्ल, क्षार, नमक, मिट्टी जड़, छाल, बीज, पत्ती, फूल, फल, गोंद, रस आदि चाहे जो हो, लेकिन जीवित-संस्थानमें

१. एक-न-एक आरजा रहा हमको। थमे दस्त तो बुखार आया।

पहुंचाकर वे गड़बड़ी उत्पन्न करते ही हैं। सभी प्राण या जीवनी-शक्तिके साथ बेमेल पड़ते हैं, सब जीवन-तत्त्वयुक्त भौतिक शरीर-के विरोधी हैं और जीवित पदार्थके सम्पर्कमें आनेपर वे रोग उत्पन्न करते हैं। एक सूत्रमें, वे सब विषका काम करते हैं।

इसके विरुद्ध, प्राकृतिक इलाजका अर्थ है, रोगी मनुष्योंपर रोग-निवारणके लिए, उन पदार्थों और साधनोंसे काम लेना जो नीरोग अवस्थामें व्यक्तिके स्वास्थ्यकी रक्षा करते हैं। यह पद्धति सब प्रकारके विषोंको ठुकराती है।

यहां लोगोंके मनमें जमे हुए एक बड़े भ्रमको दूर कर देना आवश्यक है। जल-चिकित्सा या पानीके इलाज या ठंडे पानीसे रोग-निवारणका मतलब लोगोंने यह समझ रखा है कि हम एलोपैथीके सिद्धांतको तो मानते हैं, पर उसकी दवाओंसे परहेज करते हैं और सिर्फ पानी, खुराक आदिकी मददसे रोगोंको दूर करते हैं।

प्राकृतिक चिकित्सामें न सिर्फ दवा-दारू और विषको नहीं बरता जाता, बल्कि उन्हें काममें लानेका जो सिद्धांत है, उसको भी नहीं माना जाता। सिद्धांत और व्यवहार दोनों दृष्टियोंसे हमारी पद्धति दवा-दारूकी पद्धतिकी विरोधी है। अपने तरीकेमें हम हवा, पानी, रोशनी या तापमानको दवा की जगह इस्तेमाल नहीं करते और न इसलिए कि वे दवाओंसे अच्छे और कम जोखिमवाले हैं। हमारी स्पष्ट बात है कि दवाओंको छोड़ो, क्योंकि वे एकदम बुरी हैं और प्राकृतिक उपायोंको अपनाओ, क्योंकि वे एकदम अच्छे हैं। दुनियामें इलाजका यदि और कोई उपाय न भी होता, तो भी मैं दवाओंको निकम्मी समझकर फेंकता। क्योंकि अगर मैं किसीका फायदा न कर सकूं तो नुकसान क्यों

करूंगा। कोई आदमी बीमार पड़ गया है तो क्या इसीलिए मैं उसके शरीरमें जहर डाल दूं ? आजतक किसी चिकित्सकने क्षण-भरके लिए भी यह न सोचा कि जब किसी भले-चंगे आदमीको जहर नहीं दिया जाता तो किसी रोगीके शरीरमें विष क्यों पहुंचाया जाय ? यदि हम उसके अन्दर इस विवेकके पैदा होनेकी बैठे बाट देखते रहेंगे तो तबतक शायद दुनिया का अंतही हो जायगा। औषधवादी-चिकित्सकोंने तीन हजार वर्षों तक सिर खपाया और लाखों-करोड़ों आदमियोंको अपनी दवाओंकी बदौलत मौतके मुंहमें पहुंचाया, फिर भी वे इस सवालका कोई जवाब न दे सके और शायद आगे भी उनके लिए यह पहेली अनबूझ ही रहेगी। सवाल-का जवाब वे दे भी क्या सकते हैं, जबकि कोई जवाब है ही नहीं।

वर्तमान बौद्धिक और व्यापारिक युगमें लोगोंको तथ्यका आधार लेकर सिद्धांतपर पहुंचना उचित लगता है, न कि पहले सिद्धांत स्थिर करके फिर तथ्योंकी परख करना। इसीलिए मैं भी इतिहासकी कसौटीसे कुछ ऐसे तथ्योंका उल्लेख करूंगा, जिनसे मेरी बातका समर्थन होता है, और फिर उन सिद्धांतोंपर आऊंगा जिनसे उन तथ्योंके आधारकी व्याख्या होती है।

मेरा यह दावा है और मैं इसे साबित करूंगा कि दवा-दारू-से इलाज करनेवाले पेशेके तमाम ग्रन्थों, साहित्य, सम्प्रदाय और पंथोंमें, उनके सारे इतिहासमें एवं विद्वानोंके भाषणोंमें १. रोगके स्वरूप, २. दवाओंके कार्य ३. जीवनी-शक्ति ४. प्रकृतिकी रोग-निवारक शक्ति, ५. प्रकृति और रोगके एक-दूसरेके साथ सम्बन्ध, ६. दवा और रोगोंके पारस्परिक सम्बन्ध, ७. रोग और जीवनी-शक्तिके कार्य, ८. दवा और नीरोग-संस्थानके आपसी सम्बन्ध, ९. जड़ और चेतन प्रकृतिके आपसी

सम्बन्ध, १०. रोगके कारण और लक्षणोंके आपसी सम्बन्ध, ११. नीरोग होनेके नियम तथा १२. प्रकृति और दवाओंके मूल पदार्थोंके बारेमें उल्टी बातें सिखाई जाती हैं ।

ऊपरकी बातोंमें चिकित्सा-विज्ञानके सब आधार समा जाते हैं । दूसरी ओर, नीरोग होनेके उपायोंके सब तत्त्व भी इनमें आ जाते हैं । इनमेंसे हरेक बुनियादी है । हरेककी सच्चाईके बारेमें बिना निश्चित ज्ञान हुए, चिकित्सकके पास इलाजका सच्चा विज्ञान नहीं हो सकता और न उसका इलाज ही सयुक्तिक या सफल हो सकता है । हमारे सिद्धांत कुछ मान्यताओंके आधार पर ही बनते हैं, जिन्हें हम प्रयोग द्वारा परखते हैं । पर जिसने इसपर ध्यान नहीं दिया, उसका सिद्धांत निरा शब्दाडंबर मात्र ही होगा । उसके द्वारा किया गया इलाज भी मरीजकी जीवनी-शक्ति पर अंधे प्रयोगकी भांति होगा ।

अब हम तथ्योंकी जांच करेंगे ।

: ४ :

प्रकृतिके नीरोग करनेमें दवाएं बाधक

मनुष्य-जातिके इतिहासके भिन्न युगोंमें और इस देश या दूसरे देशके विभिन्न विभागोंमें ऐसे इलाज करनेवालोंने, जिनका निरीक्षण गंभीर और अनुभव विशाल था तथा जो सच्चे उत्साह और अथक श्रमसे मानवजातिका दुःख दूर करनेमें लगे थे, अपना सोलह आने यह विश्वास प्रकट किया है कि दवाएं मरीज़को तन्दुरुस्त नहीं करतीं। दवाएं तो प्रकृतिके नीरोग करनेके निजी रास्तेमें रोड़ा ही अटकाती हैं। रोगमें इससे लाभकी अपेक्षा हानि ही अधिक होती है। खास-ख़ास बीमारियोंके बारेमें इस तरहकी राय और भी अधिक चिकित्सकोंने प्रकट की है—जैसे सुर्ख़ बुख़ार, (Croup) हैजा, गलघोंटू (Diphtheria), फेफड़ोंकी सूजन, गठिया, खसरा, पेचिस, चेचक और सब तरहके मियादी बुखार। इनमेंसे हरेकमें जब दवा बिलकुल बंद कर दी गई और कुदरती तरीकोंका सहारा लिया गया तो वे कहीं अधिक सफल हुए। मैं समझता हूं कि इस विषयमें सारी दुनियामें और सब युगोंमें किसीको सन्देहका मौक़ा नहीं रहा।

दस सालके भीतर अमरीकाके दो सौ डाक्टरोंने मुझे लिखा है कि दवाएं बिलकुल निकम्मी साबित हुई हैं और उन्होंने उनका इस्तेमाल बिलकुल छोड़ दिया है तथा हरेकको हरेक रोगके इलाज-में इससे ज्यादा अच्छी कामयाबी हासिल हुई है। हजारों स्त्री-पुरुषोंने मुझे सूचित किया है कि उन्होंने जब दवा बिलकुल

छोड़ दी और जल-चिकित्सा-सम्बन्धी विश्वकोषमें दी हुई जानकारीके अनुसार अपना इलाज किया तो वे दवाओंके ज़हरसे बचकर अपने-आपको और अपने परिवारको नीरोग कर सके। इलाज करनेवालोंमें और जनतामें फैलते हुए इन विचारोंका कुछ अर्थ है। इसपर हरेकका ध्यान जाना आवश्यक है। कुछ प्रसिद्ध डाक्टरोंका मत है कि प्राणी-मात्रको होनेवाली प्रायः सभी बीमारियां दवाओंसे ठीक होनेके बजाय प्रकृतिपर ही छोड़ दी जायं तो उसका अच्छा असर होगा।

मैंने सार्वजनिक रूपसे घोषणा की है कि प्राकृतिक उपचारसे, जिसका मैं दावा करता हूं, मियादी बुखार, फेफड़ोंकी सूजन, खसरा और पेचिस जैसे रोगोंमें, जो हमारी सेनामें फैले हैं, हजारों सिपाहियोंऔर अफसरोंकी जानें बचाई जा सकती हैं और राष्ट्रीय कोषमें लाखों रुपय़ोंकी बचत की जा सकती है। इसके लिए मैंने भरसक कोशिश की कि वाशिंगटनमें बैठे हुए अधिकारियों तथा मेडिकल कालेजोंके अध्यापकोंका ध्यान इस ओर खींच सकूं। मेरा विश्वास था कि जो सच्चाई मेरे पास है यदि उसकी ओर और लोग कान दें तो बहुत अच्छा परिणाम निकलेगा। इसके लिए मैंने अपने प्रेसिडेंटके पास, राष्ट्र-सचिव एवं कोष, युद्ध और नौसेनाके सचिवोंके पास गश्तीपत्र औरसाहित्य भेजा, पर मुझे इनका कोई जवाब न मिला। मैंने इसकी उम्मीद भी नहीं की थी। पर मैं अपने लक्ष्यके महत्त्वको समझता हूं और इसीलिए मैंने अपने उद्देश्यको कामयाब बनानेमें कोई कसर बाकी नहीं रखी।

अपने कथनकी सच्चाईके सबूतमें : न्यूयार्क मेडिकल कालेजके प्रो० आस्टिन फ्लिन्ट एम० डी० ने, जो बड़े अस्पतालमें चिकित्सक भी हैं, कुछ ही हफ्तों पहले, अपने एक व्याख्यानमें

विद्यार्थियोंके सामने कहा है कि फेफड़ोंकी सूजन (न्यूमोनिया) रोगमें उन्होंने कोई दवा नहीं दी। अस्पतालमें तो उन्होंने यह किया, पर इन्हीं प्रोफेसरका कहना था कि परिवारोंमें बिना दवा दिये काम नहीं चल सकता था। काम न चलनेका क्या अर्थ है? यही कि अस्पतालमें दवा न देनेसे भी आप रोगीसे हाथ नहीं धोते। इसी न्यूयार्क शहरमें, उन कुटुम्बोंमें, जहां दवा दी जाती है, न्यूमोनियासे सैकड़े तीस-चालीस आदमी मर जाते हैं।

प्रो० बी० एफ० पारकर (B.F. Parker) ने न्यूयार्क मेडिकल कालेजके विद्यार्थियोंके सामने कुछ दिन पहले कहा था कि खसरे और सुर्ख बुखारके इलाजमें कुछ दिनोंसे मैंने दवा देना बंद कर दिया है। इससे मुझे बड़ी कामयाबी हासिल हुई है। डा०स्नो (Dr. Snow) नामक हेल्थ आफिसरने दो साल पहले बोस्टनके मेडिकल और सर्जिकल जर्नलके जरिये यह सूचना निकाली कि उसने चेचक के तमाम मरीजोंको रत्तीभर भी दवा न दी और उसके सब मरीज अच्छे हो गये। फिलाडेल्फ़िया के प्रो० डा० जान बेल (John Bell) ने अपने एक स्नान-सम्बन्धी (On Baths) ग्रन्थमें लिखा है कि उनके साथियोंने और उन्होंने सुर्ख बुखारके बहुतसे मरीजोंका स्नानसे इलाज किया और कोई दवा न दी। उनका एक मरीज भी नहीं छीजा।

मांटगुमरी अल्बामाके डा० आमीज़ (Dr Ames) ने कई साल पहले न्यूऔरलियंसके मेडिकल और सर्जिकल जरनलमें न्यूमोनियाके इलाजका अपने अनुभवका प्रयोग प्रकाशित किया था। बहुत वर्षोंसे उनके अनुभवमें यह बात आई कि जिन मरीजोंका फस्द (Bleeding) खोलकर पारा या सुरमा (antimony) आदिसे इलाज किया गया, उनकी

बीमारी उलझ गई और उन्हें अच्छे होनेमें ज्यादा दिन लगे तथा वैसा लाभ भी नहीं हुआ। ऐसे रोगी फिर बीमारीके चंगुलमें फंस जाते हैं, उनकी जीवनी-शक्ति एकदम टूट जाती है और वे यकायक मौतके मुंहमें चले जाते हैं।

उनके देखनेमें आया कि खासकर कैलोमल और एन्टीमनी दिये जानेवाले मरीजोंकी, मौतके बाद, जांच होनेपर उनके आमाशय और छोटी आंतोंमें घनी और मारक सूजन पाई गई। दवाओंके जहरसे उनकी शक्ति बिलकुल कुण्ठित होगई थी और वे सन्निपातकी दशामें पहुंच गये थे। इस तरहकी उलझनें दवाओं-से उत्पन्न हुई बीमारीके सिवा और कुछ न थीं। डा० आमीज़ने जब अपने इलाजका तरीका सीधी-सादी हल्की औषधियोंके रूपमें बदला तो उनका एक भी मरीज नहीं मरा।

घोड़ोंके एक प्रसिद्ध डाक्टरने अश्वचिकित्सा पर हालमें ही एक पुस्तक लिखी है, जिसमें उसने घोड़ोंके न्यूमोनिया रोगका एलोपैथी तरीकेसे इलाज बताते हुए कहा है कि इस पशुके फेफड़ोंमें जब सूजन आ जाय तो जैसे आदमीका इलाज करते हैं वैसे ही फस्द खोलकर या छाले डालकर या नमक, कैलोमल और सुरमे-से उसका भी इलाज करना चाहिए।

नतीजा क्या होता है ? बेचारा पशु ज्यों-ज्यों बीमारी और इलाज पार करता है या यों कहें कि बीमारी और इलाज उस पशुमें आर-पार हो जाते हैं, तो बेचारा जानवर या तो जिंदा रहकर घिसटता रहता है या फिर मर जाता है। इन्हीं डाक्टरका यह भी कहना है कि उनके बताये उपचारके बाद अगर, पशु बच गया तो वह एक बारके न्यूमोनियाके बाद हमेशा कमजोर रहता है और बीमारीके फिर आनेका अंदेशा बना रहता है।

कमजोरी और बीमारीके लौटनेका अंदेशा ये दोनों बातें इसी तरह इलाज किये गए आदमीपर भी घटती हैं।

मेरे कई परिचित एलोपैथिक डाक्टरोंने जब यह देखा कि साधारण दवासे मरीज अच्छा नहीं होता तो मरीजको उग्र दवा देकर मौतके मुंहमें पहुंचानेके बजाय उन्होंने बिलकुल दवा देना ही बंद कर दिया और इससे मरीजोंको अधिक लाभ हुआ।

स्वर्गीय प्रो॰ विलियम तुली (Professor Wm. Tully) ने अपने व्याख्यानोंमें, जो मैंने भी सुने थे, कहा था कि कुछ साल पहले मियादी बुखार और न्यूमोनियासे इतने लोग मरने लगे कि लोगों-को संदेह हो गया कि चिकित्सक लाभकी अपेक्षा हानि अधिक पहुंचा रहे हैं। और तब निराश होकर उन्होंने किसी भी डाक्टरको बुलाना बंद कर दिया। फिर इन रोगोंसे कोई मरा नहीं। एक बार रोम नगरसे सब डाक्टर निकाल दिये गए, क्योंकि जनताके ख्यालमें उनके इलाजसे ही मृत्यु-संख्या बढ़ गई थी।

: ५ :

चिकित्साशास्त्रके अध्ययनकी प्रेरणा

स्कूलमें पढ़ते समय मेरे अध्यापकके जीवनने उन्हींकी तरह मुझे चिकित्साशस्त्रके अध्ययनकी प्रेरणा दी। उस समय न्यूयार्क-में इतनी घनी आबादी न थी। दस-पन्द्रह मीलके घेरेमें कोई डाक्टर न था। लोग बीमार तो पड़ते ही थे। जूड़ी फैलती, मेंह-पानीकी तरह सर्दी और जुकाम भी होते। न्यूमोनिया और इन्फ्लुएंजा रोजकी बातें थीं। कुकुर खांसी, गलफूली (mumps) और खसरा, झरबेरीके बेरोंकी तरह बहुतायतसे होते थे। पित्त ज्वर, मियादी बुखार तथा गठिया भी लोगोंको सताते थे। पर इनसे कोई मरता न था। कुछ लोग ज्यादा बीमार भी होते, पर आखिरमें सभी अच्छे होते थे। जंगली चाय, पसीना निका-लना, पैरोंको गर्म पानीसे धोना और पतले दलियेका पथ्य, यही सब थे उस समयके अचूक इलाज। डाक्टर तो थे ही नहीं। उपचारकोंको घरेलू दवाओंका आश्रय लेना पड़ता था। बच्चों की पैदाइशमें माताएं बीमार नहीं पड़ती थीं। कुछ दिनों बाद लोग खुशहाल हुए। उसी समय एक परदेसी वहां आया। वह देहाती स्कूलमें लड़के पढ़ानेको नौकर हुआ था। शोर हो गया कि वह डाक्टर है। लोगोंने समझा कि उनके भाग्य खुल गये। अब सर्दी, न्यूमोनिया, इन्फ्लुएंजा, फेफड़ोंकी सूजन आदि होने-पर यही स्कूली-मास्टर लोगोंको, स्कूली घंटोंके बाद, देखने जाने लगे। कामका बोझ बढ़नेपर पढ़ानेका काम छोड़कर वह

रात-दिन डाक्टरी धंधेमें लगे रहने लगे। अब कुछ ही वर्षोंमें अपाहिजों और खाट-सेनेवाले रोगियोंकी संख्या बढ़ने लगी। मेरे अपने ही कुटुंबमें मेरी मां और दो भाइयोंको थोड़ी हरारत होनेपर डाक्टर बुलाया गया। पर उसके बाद उनमेंसे कोई एक दिनके लिए भी स्वस्थ न हुआ। उस समय तो इन बातोंको देख करमुझे बड़ा अचरज होता था, पर आज तो मैं इन सबका कारण बता सकता हूं।

पिछले १६ वर्षोंमें प्राकृतिक चिकित्साका अनुयायी होनेके बाद, मैंने टाइफस, मियादी बुखार, न्यूमोनिया, खसरा और पेचिसके सैकड़ों रोगियोंका इलाज किया है और इन रोगोंसे मेरा एक भी रोगी नहीं मरा। यही बात सुर्ख बुखार और दूसरे बुखारोंके बारेमें भी रही है। मेरे विद्यालयमें पढ़े हुए डाक्टरोंने भी वर्षोंतक ऐसे रोगोंका इलाज किया है, पर जहां तक मुझे मालूम हुआ है, उनका कोई मरीज छीजा नहीं; क्योंकि शुरूसे ही उन्हें बुला लिया गया था और उनके पहले रोगीको कोई दवा नहीं दी गई थी।

: ६ :

दवा जरूरी नहीं

न्यूयार्क मेडिकल कालेजके प्रो० बार्करके इस कथनमें बहुत बड़ी सच्चाई है कि खसरा, सुर्ख बुखार और इसी तरहके खुद संभल जानेवाले रोगोंमें जो दवाएं दी जाती हैं, वे बीमारियोंकी अपेक्षा रोगियोंको अधिक मारती हैं।

अभी पश्चिमी अमरीकाकी यात्रामें मैंने देखा कि मेरे विद्यालयके स्नातक, जो वहांके शहरमें रहते हैं, सब इस बात-का समर्थन करते हैं कि इन रोगोंमें दवाकी जरूरत नहीं है। यद्यपि इन रोगोंके मरीजोंकी मृत्यु अन्यत्र होती है, पर उनके अपने रोगियोंमें अबतक कोई नहीं छीजा। फ्रांसके विद्वान चिकित्सक मार्जेंदीने, जो फ्रेंच एकेडेमीमें शरीर-विज्ञानके अध्यक्ष थे, एक प्रयोग किया। पेरिसके एक अस्पतालमें उन्होंने रोगियोंको तीन हिस्सोंमें बांटा। एक वर्गको पोथियोंमें बतलाई हुई सामान्य दवाएं दीं। दूसरे वर्गको घरेलू दवाएं दीं। तीसरे वर्गको कोई दवा नहीं दी। परिणामस्वरूप जिस वर्गने कम दवाएं खाईं, वह अधिक दवा खानेवाले वर्गसे अच्छा रहा, जिन रोगियोंने बिल-कुल दवा नहीं खाई, वे सबसे चंगे रहे।

मार्जेंदीने मियादी बुखारके मरीजोंपर भी यह प्रयोग आजमाया। उनके दो वर्ग किये गए। एक को दवाएं दी गईं और दूसरे को बिलकुल नहीं। केवल सेवा-शुश्रूषा और प्राकृतिक उपचारका सहारा लिया गया। पहले रोगियोंमें एक-चौथाई मर

गए, पर दवा न लेनेवालोंमें एक भी नहीं मरा। इसपर मार्जेंदीने क्लासके सामने अपना यह ब्रह्मवाक्य कहा—सज्जनो, दवाओंसे इलाज भारी गड़बड़ घोटाला हैं। (Gentlemen, Medicine is a Great humbug.)

ओहियोके डाक्टर जेनिंग्स (Dr. Jennings) का नाम किसने नहीं सुना ? वह बड़े सच्चे, पैनी दृष्टिके परोपकारी व्यक्ति थे। उनका निश्चित मत था कि दवाओंसे इलाज बिलकुल गलत तरीका है। रोग दूर करने या प्रकृतिकी मदद करनेके बजाय, दवाएं इलाजमें रुकावट डालती हैं और पहले रोगको वैसे ही या और भी खतरनाक रोगमें बदल देती हैं। इसकी जांच करनेके लिए उन्होंने कई वर्षों तक बिना तनिक भी दवाका इस्तेमाल किये इलाज किया। उनके रोगियोंको इसका पता न चल पाया। लोगोंने यह न जाना कि योंही उनके रोग चले गए या ठगी करके उन्हें स्वस्थ बना दिया गया, अथवा धोखेसे उनके डाक्टरी बिलोंकी जड़ काट डाली गई और उनके शारीरिक ढांचोंको भी कायम रखा गया। डा० जेनिंग्सके राज्यमें रोगोंकी कटुता और जोखिम जैसे चली ही गई थी। रोगियोंके मनमें विश्वास और दृढ़ता लानेके लिए वह कुछ रंगीन पानी, मीठी गोलियां या सफेद चूरन काममें लाते रहे और वह रोगियोंका ध्यान ऐसे प्राकृतिक उपायोंमें लगाते रहे, जिससे कुदरत कम-से-कम समयमें और अच्छे-से-अच्छे ढ़ंगसे रोगका इलाज कर दे।

उन्हें ग़ज़बकी सफलता मिली। उनका नाम दूर-दूर तक फैल गया। चारों ओर उनकी प्रशंसा होने लगी। कुछ वर्षों-तक अपने सिद्धांतको आज़मा लेने पर उन्होंने अपनी पेशेवर बिरादरीमें अपनी सफलताके रहस्यका उद्‌घाटन किया। क्या

आप समझते हैं कि उनमेंसे एकने भी डा० जेनिंग्सकी बिना दवाके इलाज करनेकी युक्तिको अपनाया ? नहीं, एकने भी नहीं। आज डा० जेनिंग्सका एक भी अनुयायी नहीं है। अवश्य ही डाक्टरोंने सोचा कि दवाओंका मुंह काला करनेका तरीका अस्पतालोंमें भले ही चल जाय, परिवारोंके इलाजमें इससे काम न चलेगा—डा० जेनिंग्स या जनता इससे भले ही जी जाय, पर हम कैसे जीयेंगे ?

पच्चीस-तीस साल पहले 'मैचलेस सैनेटिव' (बेजोड़ स्वास्थ्यवर्धक) नामसे एक दवा चलती थी। उसके गुणोंकी धूम मच गई थी। मैंने भी बहुत-से जीर्ण रोगी देखे, जो डाक्टरोंसे तंग आ चुके थे और पेटेंट दवाएं खाते-खाते ऊब गये थे, पर उन्हें कभी ऐसा लाभ न हुआ था, जैसा इस दवासे। हां, दवा सचमुच बेमिसाल थी। वह तो सब रोगोंकी रामबाण औषधि ही थी—भारी गुणकारी और भारी दामोंकी। पर उसमें था क्या ? शुद्ध जल और कुछ नहीं। उसका दाम आधे औंस या चौथाई छटांकका सिर्फ ढाई डालर या बारह रुपयेके करीब था !

: ७ :

होमियोपैथी

यहां अपने होमियोपैथ मित्रोंके बारेमें भी कुछ कहना अप्रासांगिक न होगा। वे भयंकर रोगोंका इलाज भी बिना दवाके ही करते हैं। पर वे दवाओंके अप्रयोगके बहुत निकट आकर भी उसके महत्त्वको नहीं समझ पाते। अगर ठीक-ठीक हनीमैनके अनुसार ही वे दवा दें तो उनके नुस्खोंमें दवाकी एक ऐसी छाया मात्र होगी, जिसका वास्तविक रूप नहींके बराबर ही होगा। एलोपैथी इलाजमें मैग्नेशिया या काड लीवर आयलकी जितनी मात्रा दी जाती है, उसे अगर सारे आकाशमंडलमें पानी भर-कर पृथ्वीसे लेकर दूरतम नक्षत्र तक फैला दें और उस पानीकी एक बूंदके दस-लाखवें हिस्सेकी एक मात्रा बनायें तो उस दवाका ठीक बल (high potency) होगा, जो होमियोपैथीके सूक्ष्मातिसूक्ष्म औषधि-विज्ञान के अनुसार रोगनिवाणरका कार्य करेगा, यद्यपि यह बात मानवी मस्तिष्ककी पहुंचसे बाहर है।

क्या बीमारीके इलाजमें होमियोपैथ उतने ही सफल नहीं हैं, जितने कि उनके प्रतिद्वन्द्वी एलोपैथ ? इसका जवाब उनकी बढ़ती हुई संख्या और धनी परिवारोंमें उनके प्रवेशसे मिल सकता है। लोगोंका होमियोपैथीमें विश्वास अधिक है, यह उसकी तरक्कीका कारण नहीं है, बल्कि बड़ा कारण यह है कि उनको उससे डर कम है।

न्यूयार्कके होमियोपैथ वर्षोंसे चिल्ला रहे हैं कि हमें अस्पतालमें एलोपैथीके साथ-साथ रोगियोंका इलाज करके यह दिखानेका मौका दिया जाना चाहिए कि दोनों पद्धतियोंका आपेक्षिक मूल्य क्या है। पर उन्हें इसकी इजाजत नहीं मिलती, क्योंकि सारे अधिकार एलोपैथोंके हाथोंमें हैं। एलोपैथी ही एकमात्र राष्ट्रीय, प्रादेशिक और नागरिक शासन में छाई हुई है और अपने गुणोंका डंका पीटकर वह दावा करती है—"हम कोई भी जोखिम उठानेको तैयार नहीं हैं, हमारे इस भारी-भरकम पेशेकी जो ठकुराई है उसके सामने हम किसी भी अंटशंट इलाज या अवैज्ञानिक तरीकेको बर्दाश्त नहीं कर सकते।"

पर सच्चे इलाजको और आडंबरसे क्या लेना-देना! क्या एलोपैथीने इस न्याय्य चुनौतीको लोगोंके स्वास्थ्यकी आशंकासे ठुकराया या इससे उसे अपने अस्तित्वमें खतरा लगा? अब भी होमियोपैथ कह रहे हैं कि फौजी अस्पतालोंमें उनका भी एक विभाग चलने दिया जाय, जहां रोगी जो चाहे वह इलाज करा सके। अगर उनकी बात मान ली गई तो नतीजा एलोपैथीके लिए घातक ही होगा।

पिछले सप्ताह अल्बानीमें एलोपैथ डाक्टरोंकी न्यूयार्क स्टेट मेडिकल सोसाइटीने मिलकर एक प्रस्ताव पास किया कि होमियोपैथी इलाजको फौजमें न घुसने दिया जाय। ठीक ही है। पर क्या लोगोंको भी इसमें अपनी राय देनेका अधिकार है? क्या डाक्टरोंके अलावा जनताका इससे कोई मतलब नहीं? बिलोंका भुगतान तो जनताके पैसेसे ही होता है, रोग और मृत्यु भी उन्हींको भुगतानी पड़ती है!

: ८ :

बुनियादी बात

यहां मैं एक चलती बात कहना चाहता हूं, पर उसका व्यावहारिक मूल्य है। इलाज करनेके जितने तरीके हैं और जितने चिकित्सक हैं, उन सबके बारेमें यह बात लागू होती है कि दवा-दारूसे इलाज करनेके ढंगमें जितना भी उनका विश्वास कम होगा उतना ही कुदरती इलाजमें अधिक होगा। इसलिए जो लोग कम दवा देते हैं या बिलकुल नहीं देते, वे अवश्य ही प्राकृतिक उपचारपर अधिक ध्यान देते हैं। इसका अर्थ है रोगीकी अच्छी सेवा-शुश्रूषा। वस्तुतः इलाजमें जो कुछ भी गुणकारी और लाभप्रद है, वह अच्छी सेवा-शुश्रूषामें समाविष्ट है। इस तरीकेके चिकित्सक इसपर अधिक ध्यान देते हैं कि जीवनी-शक्तिको हवा, रोशनी, तापमान, पानी, व्यायाम और विश्रामका यथोचित भाग, जो स्वास्थ्यके लिए आवश्यक है, दिया जाय और सब तरहके जहर, गंदगी और कीटाणुओंको, जो स्वास्थ्यकी हानि करनेवाले हों, दूर किया जाय। इसीका नाम तो प्राकृतिक चिकित्सा है। यही नीरोग होनेका सच्चा उपाय है। ईश्वर और प्रकृतिने इसके अलावा किसी दूसरे उपायकी रचना ही नहीं की है। इस विश्वका महान रचयिता इलाजके और किसी दूसरे उपायकी अनुमति नहीं दे सकता। जबतक कि वह स्वयं ही विश्वरचनाके अपने नियमोंको उलट-पुलट न कर दे और अपने महान गुणोंको खंडित न कर दे। युद्धमें

लड़नेवाले सिपाहियोंके स्वास्थ्यके बारेमें विचार करें, तो आपने सेनेटरी कमीशन (स्वास्थ्य आयोग) क्यों बनाया ? डाक्टर क्या कर रहे हैं ? मेडिकल ब्यूरो किस कामके लिए है ? जिसका अध्यक्ष पादरी हो और जिसका मंत्री कोई पेशेवर इलाज करने-वाला न हो, उसे चिकित्सा-विभागकी देख रेखके लिए आपने क्यों आवश्यक समझा ? ऐसा ही हम परिवारों में भी क्यों नहीं करते कि किसी पादरी या समझदार व्यक्तिको प्राकृतिक उपचारोंके लिए रख दें, भले ही डाक्टर भी अपनी दवाएं देता रहे !

: ६ :

दवा-दारूका दुष्परिणाम

स्वास्थ्य आयोगने युद्धके शिविर और अस्पतालोंमें जाकर रिपोर्ट दी है कि वहां स्वास्थ्य-संबंधी मामूली बातोंपर भी ध्यान नहीं दिया जाता है। अखबारोंमें जोरदार शिकायतें निकली हैं कि मेडिकल ब्यूरोके काममें बाहरी लोग दखल देते हैं और उसकी बेइज्जती करते हैं। स्वास्थ्य आयोगकी शिकायत है कि रोगीको साफ हवा मिलनेकी तरफ ठीक ध्यान नहीं दिया जाता, सफाई-की तरफ लापरवाही होती है, कहीं गंदा पानी पीनेके काममें लाया जाता है और कीटाणु छूत आदिसे बीमारियां फैलने दी जाती हैं। यह सब क्यों होता है? क्या हमारे इलाज करनेवाले स्वास्थ्यकी बुनियादको नहीं समझते? क्या वे रोगके कारणों-को नहीं जानते? अगर जानते हैं तो बाहरी लोगोंकी तरह वे भी इन बातों पर ध्यान क्यों नहीं देते? क्या वे लापरवाह हैं, मूढ़ हैं या उपेक्षा वृत्तिवाले हैं?

दरअसल तो प्राकृतिक इलाज और स्वास्थ्य उनके पेशेका विषय ही नहीं है। अगर रोगोंको दवा-दारूके हवाले करके दबाना या दूसरी शक्लमें बदल देना ही हमारा ध्येय हो तो बीमारियोंकी रोकथाम और स्वास्थ्य-रक्षाका काम दूसरे लोगोंको ही सौंपना चाहिए। भले ही यह बात अजीब लगे, पर मुझे कहना पड़ता है कि चिकित्सा-संबंधी शिक्षणालयों में या उनकी पुस्तकोंमें स्वास्थ्यका विषय नहीं सिखाया जाता।

दवाओंके नुस्खेमें तो उसकी परवा होती नहीं, पर जब मियादी बुखार और न्यूमोनिया संक्रामक रूपसे फैल जाता है तब डाक्टर दवाएं पिलानेपर उतारू हो जाते हैं। वे कुनैनकी भारी-भारी मात्राएं गलेमें उड़ेलते हैं, कैलोमल खुलकर पिलाते हैं और फस्द खोलकर या नशीली चीजें देकर जीवनी-शक्ति और प्रायः रोगी-पर फिर विजय पा लेते हैं।

कोई इससे इन्कार नहीं कर सकता कि इस्तेमाल की जाने-वाली और कीटाणुओंकी रोकथामके लिए खुलकर प्रयोग की जानेवाली कुनैन घातक जहर नहीं है। कौन नहीं जानता कि संखिया भी विष है, पर आज ही पिछले हफ्तेके न्यूयार्कके मेडिकल टाइम्समें मैंने एक लेख पढ़ा, जिसमें कुनैनके बजाय संखिया देनेकी हिमायत की गई है और वह भी बड़ी मात्रामें। आज ही, जनवरी, १८६२ के पत्र 'ब्रेथवेट रिट्रोस्पेक्ट' (यूरोप-का प्रमुख एलोपैथी-पत्र) में मैंने कई लेख देखे, जिनमें संखियाको कुनैनसे श्रेष्ठतर कहा गया है। जरूर कहीं कुछ भूल है। क्या यह संभव है कि कुनैन और संखिया एक-दूसरेकी जगह काम में लाये जा सकें? मैं समझता हूं कि मैं इस भूलका पर्दा-फाश कर सकूंगा।

मेडिकल ब्यूरोको कोई अधिकार नहीं है कि वह सेनाके स्वास्थ्य के बारे में ऐसी लापरवाही बरते। वास्तवमें तो उसकी चिकित्सा-विधि मिथ्या है और इलाजके बारे में वह गलत शिक्षा-प्रणाली पर भरोसा करती रही है। यदि उसे अपने कर्त्तव्यका ज्ञान नहीं है तो उसे सजा मिलनी चाहिए। मैं दावेके साथ कहता हूं कि दुनियामें सिर्फ एक ही जगह है, जहां स्वास्थ्यका विषय ठीक पढ़ाया जाता है और वह स्थान न्यूयार्क हाइजियोथेराप्यूटिक

कालेज है (डा० ट्राल के विद्यालयका नाम) और इसी विद्यालय-को एलोपैथ डाक्टर नहीं मानते हैं। यह सच है कि न्यूयार्ककी बिधान-सभाने इस कालेज को मान्यता दी है। चिकित्सा-विज्ञानके छात्र अपने कालेजोंमें स्वास्थ्य-सुधार और उसकी रक्षा सीखने नहीं जाते, बल्कि बीमारियों के लक्षण और उन्हें दूर करने या दवा देनेकी विधि सीखने जाते हैं। क्या इन चिकित्सकोंको स्वस्थ जीवनके नियमोंकी आवश्यकता नहीं या ये लोग बीमारियों से मुक्त हो गये हैं ?

: १० :

दवाएं न लेनेसे लाभ

फ्लोरेंस नाइटिंगेलका नाम आपने सुना होगा। वह वीर अंग्रेज लड़की क्यों कराहते घायलोंके और बिलखकर मरनेवाले सैनिकोंके बीच अपना डेरा डालने गई ? क्यों शिविर और अस्पतालोंकी गंदगी और धूलमें उसने रहना स्वीकार किया ? अफसोस है कि उसे इसके लिए क्रीमिया जाना पड़ा कि अंग्रेजी डाक्टरोंको स्वास्थ्यकी बातें समझाये, संसारके ऊंचे दर्जेके चिकित्सा-संबंधी कालेजोंके स्नातकोंको मामूली समझदारीकी बातें सिखाये, धुरंधर इलाज करने वालोंको, जिनके पास अनुभव और डिग्रियोंके बड़े पुछल्ले हैं, यह बताये कि घायल रोगी बिना खुली हवाके आरामकी सांस नहीं ले सकते और यह कि बीमारी-के इलाज के लिए सफाई बहुत जरूरी है। साथ ही यह भी बताये कि पानी, रोशनी, समशीतोष्ण तापमान और विश्राम भी बीमारी के कारणोंको दूर करने, शरीरकी गंदगीको हटाने, जीवनी-शक्तिको सतेज करने, बढ़ते हुए कीटाणुओंको नष्ट करने और धूलको हटानेके लिए उतने ही जरूरी हैं।

अंग्रेजी सर्जन-डाक्टर शरीरके अवयवोंको तो बड़े मजेमें काट सकते थे, जख्मोंकी मरहम-पट्टी भी होशियारी से करते थे, फस्द खोलने (रक्त-मोक्षण) में भी निपुण थे, पारा, नशीली वस्तुएं, कुनैन, संखिया आदिके इस्तेमालमें भी चतुर थे, लेकिन स्वच्छता और सफाईके विषयमें, जिसकी सबसे ज्यादा जरूरत

थी—वे अनाड़ी थे ।

उन डाक्टरोंके बीचमें किसी 'मूसा' के आने की जरूरत थी। पुराने समयमें जब मूसा अपने अनुयायियोंको चालीस सालकी यात्रापर रेगिस्तानके बीचमेंसे ले गया था तो उसने कितने ही स्वच्छताके नियम लागू किये थे। सफाईके संबंधमें बहुत सूक्ष्मता-से उसने आदेश दिये थे। पड़ावमें वह किसी तरहकी गंदगीको बर्दाश्त नहीं करता था। यह लोगोंका सौभाग्य था कि उसके पास मलेरियाको दबानेके लिए संखिया भी न था। इसलिए उनका प्रतिबन्ध (prevention) ही एकमात्र उपाय था। अगर आजकलके हमारे डाक्टरोंकी तरह मूसा भी स्वास्थ्य और स्वच्छताके नियमोंसे अपरिचित होता तो चालीस सालकी यात्राके चौथाई समयमें ही उसके सब साथी महामारी या उन रोगोंसे, जो आजकलकी फौजोंको दबोच लेते हैं, मर-खप गये होते।

यहांसे नजदीक ही जो हमारी सेना है, उसके शिविर-अस्पतालोंमें जाकर आया हूं। सर्जनने कल ही मुझे बताया कि उसकी टुकड़ी कुल फौजमें सबसे तगड़ी थी। वह कोई दवा नहीं देता था और उसका सहायक भी दवा इस्तेमाल नहीं करता था। उन्होंने मियादी बुखार, न्यूमोनिया और पेचिसके सैकड़ों रोगियोंका इलाज किया, पर एक भी मरीज नहीं गंवाया।

आज मैं उनके नाम नहीं लूंगा, पर यह युद्ध समाप्त हो जाने-पर उनके नाम बताकर इन तथ्योंको सिद्ध किया जा सकेगा। अभी तो इतना ही कहना काफी है कि वे मेरी ही मान्यता और मेरे ही विद्यालयके अनुयायी हैं। अस्पतालोंमें सेवा करनेवाली छात्राओंने मुझसे कहा है कि सैकड़ों मरीज सिपाही उनसे

दवाएं फेंक देनेकी प्रार्थना करते हैं। वे तनिक भी दवा लेना नहीं चाहते। किन्हींको तो दवाओंसे ऐसा हड़कम्प होता है जैसा दुश्मनकी गोलियोंसे। मुझे बताया गया कि मियादी बुखार और न्यूमोनियाके बीसियों मरीजोंकी दवाएं गलेके नीचे न जाकर और कहीं बह गईं। क्या इनमेंसे एक भी रोगी मरा? नहीं, वे सब अच्छे हुए।

इन बीमारियोंके सभी अवस्थाओंके बहुत-से मरीज मैंने भी देखे। सब ठीक हो रहे थे। किसीके रोगमें कोई उलझन न थी और न बीमारीके लौट आनेका कोई डर था। इस महकमेके सबसे बड़े अस्पतालमें कई नर्सें ऐसी हैं, जो दवाओंको नाली में बहा देती हैं। पर दवाओंके अभावमें उनका कोई मरीज मरता नहीं।

मुझे यह भी बताया गया कि अस्पतालोंमें जो डाक्टर छोकरे हैं, वे पुरानोंकी बनिस्बत बहुत ज्यादा दवा देते हैं। प्रो० अलेक्जेंडर स्टीविंस एम० डी० की राय है कि नये डाक्टर जब अपना धंधा शुरू करते हैं, तो उनके पास हर बीमारीके लिए बीस दवाएं होती हैं, पर तीस साल बीतते-बीतते वे देखते हैं कि हर दवा बीस बीमारियों में काम करती है। चिकित्सकोंकी आयु बढ़नेके साथ-साथ दवाओंके बारेमें उनका संदेह भी बढ़ता जाता है। वे प्रकृतिकी शक्तिपर अधिक विश्वास करने लगते हैं।

दुर्घटना या चोट-फेंटको छोड़कर संसारमें बीमारीके दो ही कारण होते हैं—एक तो बाहरसे शरीरके भीतर लिये गए ज़हर तथा गंदगी, दूसरे शरीरके भीतर ही उत्पन्न हुआ वह खारिज माद्दा जो बाहर फेंके जानेसे रुक जाता है।

दोनों ही हालोंतमें नतीजा एक ही होता है, यानी मलकी रुकावट। यह रुका हुआ माद्दा ही बीमारीका कारण है। मानसिक क्षोभ या शारीरिक चोटोंके अतिरिक्त उपर्युक्त दो कारणोंके सिवा रोगका तीसरा कारण नहीं है।

: ११ :

रोग क्या है ?

रोग क्या है ? शरीरके दोषको शरीर द्वारा हीं शरीरसें बाहर निकालनेका प्रयत्न मात्र रोग है, और उस दोषसे शरीरको हुई हानिकी फिरसे पूर्तिका प्रयत्न। बीमारी तो फिरसे सफाई करनेका तरीका है। यह तो सुधारका कार्य है। यह जीवनी-शक्तिका संघर्ष है, जो अवरोध या रुकावटको दूर करके प्रवाह-स्रोतोंको साफ रखना चाहती है। क्या यह उचित है कि इस संघर्षको, आत्मरक्षाके इस तरीकेको, मरम्मतके इस प्रयत्नको, जीवनी-शक्तिको कायम रखनेकी इस लड़ाईको, जीवित-संस्थानके शत्रुओंके विरुद्ध इस युद्धको, रक्तमोक्षण करके हम दबा दें या दवा देकर उसे और बढ़ा दें या नशीली वस्तुओंके प्रयोगसे उसका जोर घटा दें या छाले डालकर और जलाकर उसके काममें गड़बड़ी उत्पन्न कर दें या उसमें उभार ला दें या दवा और विष देकर उलझन पैदा कर दें, या उसका रुख बदल दें ?

दवा देना बीमारीके कारणोंको बढ़ा देना है, क्योंकि दवा हमेशा बीमारी पैदा करती है। अवश्य ही, उससे एक बीमारी अच्छी होकर (अच्छी होती दिखाई देकर) दूसरी पैदा हो जाती है। क्या कारणसे कारण दूर किया जा सकता है ? क्या विष विष-को बाहर निकाल सकता है ? क्या गंदगी गंदगीका खात्मा कर सकती है ? क्या एक ढेरकी बनिस्बत प्रकृति दो या अधिक ढेरों-

को ज्यादा आसानी से हटा सकती है ? नहीं, ऐसा कभी नहीं हो सकता। एक आदमीमें गंदगी आ गईहै, इसलिए उसे अधिक विष पिलाना ऐसा ही है जैसा शैतानोंको भगानेके लिए उनके राजासे सहायता मांगना। यह शास्त्र और विचार दोनोंके विरुद्ध है।

दवासे इलाज करने या दवा देकर जीवनी-शक्तिको मारने-(दबाने) का नतीजा एक ही होता है अर्थात् रोगके कारणोंको शरीरके भीतर ही दबा देना और दोषको भड़कने देकर पुरानी और पहलेसे भी बुरी बीमारियोंको पैदा करना। रोगके कारणों-को कायम न रखकर उन्हें तो बाहर निकालना ही भला है। उसे ठीक करनेके संघर्षको, जिसे हम बीमारी कहते हैं, मदद देनी चाहिए और उसे नियमित करके उसका रुख ठीक करना चाहिए, जिससे, सफाईके कामको वह सफलतापूर्वक कर सके, न कि यह कि दवारूपी विष देकर उसका जोर घटा दिया जाय या उसके काममें रुकावट पैदा की जाय, जिसके फलस्वरूप नई बीमारियां उत्पन्न हों और जीवनी-शक्तिका यह संघर्ष अधिक उलझ जाय या परेशानीमें पड़ जाय।

: १२ :

दवाओंके विषयमें चिकित्सकोंके मत

दवा देनेका अर्थ है, शरीरके कामका भार बढ़ा देना। यह तो दुश्मनको मदद देने जैसा काम है। यह ऐसा ही है जैसे पीछे-की कतारमें खड़े हुए अपने ही सिपाहियोंपर, जो दुश्मनसे लड़ना चाहते हैं, गोली चला देना। क्या फौज एककी जगह दो दुश्मनोंसे अच्छी तरह लड़ सकती है ? यह तो वैसा ही हुआ जैसे एक बांहको कमरसे बांधकर सिर्फ दूसरीसे दुश्मनपर वार करना। क्या दोनों हाथोंसे काम लेना अच्छा न होगा ?

अपने तर्कको आगे बढ़ानेसे पहले मैं संक्षेपमें उसके पक्षमें अत्यन्त प्रामाणिक व्यक्तियोंके वचन आपके सामने पेश करना चाहता हूं। मैं पाठ्य-ग्रन्थों और जीवित शिक्षकोंके शब्द ही पेश करूंगा।

यूनाइटेड स्टेट्स डिस्पेंसरीका कहना है, "दवा वह वस्तु है, जिससे शरीरपर नीरोगकारी प्रभाव होता है।" यदि सचमुच ऐसा हो तो कहना ही क्या है। पर इसके खिलाफ न्यूयार्क यूनिवर्सिटी मेडिकल स्कूल के प्रो॰ मार्टिन पेन (Martin Pain) अपनी पुस्तक 'इन्स्टीट्यूट आफ मेडिसिन' में कहते हैं—"दवाएं निश्चयपूर्वक जीवनी-शक्तिको घटानेका असर रखती हैं।" प्रो॰ पेन इस जमानेके एकमात्र लेखक हैं, जिन्होंने चिकित्सा-विज्ञानके सिद्धान्तोंपर गंभीरतासे सोचा है। उनकी बातको योंही नहीं उड़ाया जा सकता। वह फिर कहते हैं कि हम दवाओंका

प्रयोग करके एक बीमारी अच्छी करते हैं और दूसरी पैदा कर देते हैं। इस बातमें वजन है और सच्चाई भी।

न्यूयार्क कालेज आव फिजिशियंस एंड सर्जन्स के प्रो० एलोंजो क्लार्क (Alonzo Clark) एम० डी० का कहना है, "हमारी सब दवाएं जहर हैं। उनकी हर खुराकसे रोगीकी जीवनी-शक्ति घटती है।"

उसी स्कूल के प्रो० जोसेफ एम० स्मिथ (Joseph M. Smith) का कहना है, "सब दवाएं रक्तमें जाकर उसे जहरीला बना देती हैं, ठीक उसी तरह, जैसे विष रोग उत्पन्न करते हैं।"

न्यूयार्क मेडिकल कालेजके प्रो० सेंट जान (St. John) का कहना है– "सब दवाएं जहरीली हैं।"

उसी स्कूलके प्रो० पेसली (Professor E. R.Peaslee) एम० डी० का कहना है—"जोरदार दवाएं देना हाजमा बिगड़ जानेका सबसे प्रधान कारण है।"

उसी स्कूलके प्रो० कोक्स (Professor Cox) एम० डी० का कहना हैं—"किसी बीमारीमें आप जितनी कम दवा इस्तेमाल करेंगे, रोगीका उतना ही अधिक हित होगा।"

ये सभी आचार्य प्रो० पेनकी बातका समर्थन करते हैं कि दवाएं जीवनी-शक्तिको मूर्च्छित करती हैं। इनमें कोई नहीं मानता कि उनसे मनुष्य स्वस्थ होता है।

क्षणभरके लिए दवाओंके हितकर या मारक होनेकी बहसको किनारे रखकर हम इसपर विचार करें कि दवाएं काम किस तरह करती हैं?

न्यूयार्क मेडिकल कालेजके प्रो० डेविसका कहना है— "दवाओंकी कार्यविधि अभी तक हमसे छिपी हुई है। हम यह

मानते हैं कि वे असर करती हैं, पर कैसे, यह बिलकुल नहीं जानते ।"

न्यूयार्क मेडिकल स्कूलके प्रो० कार्सनका कहना है—"हम नहीं जानते कि रोगी दवा देनेसे अच्छे होते हैं या प्रकृति उन्हें अच्छा करती हैं ।"

उसी स्कूलके प्रो० ई० एस० कारका कहना है—"सौमेंसे एक चिकित्सक भी रसायनशास्त्रका ऐसा ज्ञाता नहीं होता कि जो इस मिलावटको पहचान सके । इसलिए चिकित्सक भी यह नहीं जान पाता कि वह किस मात्रामें दवा दे रहा है ।"

इन लेखकोंमें कई बातोंमें मतभेद है, पर इस बातमें सब एकमत हैं कि दवाएं रोग-उत्पन्न करती हैं और उनका प्रभाव अनिश्चित है और हम उनके असर डालनेके ढंगके बारेमें कुछ नहीं जानते ।

उसी मतको माननेवाले प्रो० जोसेफ स्मिथ एम० डी० की साक्षी है कि "दवाओंसे रोग अच्छा नहीं होता । रोग हमेशा प्रकृति अच्छा करती है ।"

प्रो० क्लार्ककी घोषणा है—"चिकित्सकोंने ऐसे हजारोंको कब्रमें पहुंचा दिया, जिन्हें प्रकृति अच्छा कर लेती ।

सुर्ख बुखारमें आप कुछ न करें, सिर्फ रोगीको प्रकृतिपर छोड़ दें ।"

हमारी अब ऐसी हालत है कि इलाज-क्षेत्रके पेशेवर लोग तीन-हजार वर्षोंसे दवाओंका अंबार लगाते आ रहे हैं । उनकी तारीफका पुल बांधनेवाले पोथोंसे पुस्तकालय भरते रहे हैं । अबतक दो हजार दवाएं (जिनके बीस वर्ग हैं) तो हो गई हैं, जिनका इन पोथोंमें वर्णन है । नित्य एक-न-एक नई दवा निकल

रही है, पर वे कोई लाभ नहीं पहुंचातीं । तो फिर दवाएं दी ही क्यों जाती हैं ? यदि प्रकृति ही अच्छा करती है तो उसीका सहारा क्यों न लिया जाय ? क्या कोई कह सकता है कि दवाएं प्रकृतिकी मदद करती हैं । कैसे ? क्या स्वास्थ्यप्रद अवस्था लाकर ? क्या मारक असर डालकर ? क्या रक्तमें जहर घोल-कर ? क्या नया रोग उत्पन्न करके ? इनके पीछे कोई बुद्धिसंगत बात नहीं है । सब विचित्र गड़बड़-झाला है ।

मेरी दलीलोंका जवाब डाक्टरी पोथियोंमें नहीं है, लेकिन मैं उनका जवाब बतलाऊंगा । उनका जवाब कभी मिल नहीं सकता जबतक कि एक दूसरे मूलभूत सवालसे न निबट लिया जाय । प्रश्न रोगके स्वरूपका है । प्रो० गौसका कहना है—"बीमारीकी असलियतके बारेमें हमें बहुत कम मालूम है। प्रायः कुछ भी मालूम नहीं है ।" फिलाडेल्फियाके जेफर्सन मेडिकल कालेजके प्रो० जार्ज वुड एम० डी० का कहना है—"रोगोंके कारणोंको जाननेकी कोशिश की गई है, पर उसमें कामयाबी नहीं हुई है । जब हम स्वास्थ्यप्रद कार्योंकी असलियतके बारेमें कुछ नहीं जानते तो उनके बिगड़ जानेको ही कैसे समझ सकते हैं ?"

इस प्रकार बड़े-बड़े शास्त्रज्ञ विद्वानोंकी रायमें डाक्टरोंको बीमारीके स्वभावका पता नहीं है, दवाएं कैसे असर करती हैं, इसका भी उन्हें कुछ ज्ञान नहीं है, बीमारी और दवाके आपसी सम्बन्धोंकी जानकारी भी नहीं है, तो फिर वे दवाएं देते ही क्यों हैं ? सचमुच यदि वे अक्लसे काम लेते होते तो कभी दवायें न देते ।

बीमारीकी असलियतके बारेमें जाननेका मैं दावा करता हूं । दवा कैसे असर करती है, इसका भी मुझे पता है । दवा तथा

बीमारीके आपसी सम्बन्धका भी मुझे परिचय है। और मैं दवा देता भी नहीं। अगर अमरीकाके सब डाक्टर आज रातको पूरी तरह यह समझ लें तो कल सुबहसे कोई भी दवासे इलाज करने-वाला न रहेगा। चिकित्सक दवा और रोगोंके सम्बन्धको नहीं समझते, इसलिए वे किसी व्यक्तिके बीमार होनेपर उसे दवा देते हैं। मैं जानता हूं कि चिकित्सक वर्ग ईमानदार है, पर वह गलतीपर है। वे रोगपर इस तरह हमला करते हैं मानो किसी दुश्मनसे लड़ रहे हों। वे मनुष्य-शरीरसे ही लड़ाई मोल ले लेते हैं। मैं नहीं समझता कि दुनियामें कोई भी चिकित्सक ऐसा बेवकूफ और पाजी होगा, जो बीमारीकी असलियत और दवा-के असरको जान लेनेके बाद क्षणभरके लिए भी दवाओंसे डाक्टरी करना चाहेगा।

हालमें तीन बड़े आदमी संध्याके सूर्यकी भांति अस्त हो गये। तीन मजबूत, बहादुर आदमी परिपक्व अवस्था तक पहुंचनेके पहले ही कब्रमें चले गये। यदि दवाके जरिए इलाजका तरीका न होता तो वे यों मिट्टीमें न मिल जाते। मेरा आशय है—अमरीका-के सिनेटर डगलससे, इटलीके काउंट कावूरसे और इंगलैंडके राजकुमार एलबर्टसे। इन तीनों व्यक्तियोंको दवाओंने मार डाला, यद्यपि चिकित्सकोंका कोई बुरा इरादा न था। इनके बारेमें मैं फिर कुछ कहूंगा कि इन्हें किस प्रकार इलाजने मौतके मुंहमें पहुंचा दिया।,

अमरीकाके तीन प्रेसिडेंट भी १. वाशिंगटन, २. हेरिसन ३. टाइलर, इसी प्रकार अपने चिकित्सकों द्वारा समाप्त कर दिये गए। मैं और अधिक आदमियोंके नाम न लूंगा।

अभी एक दिन पहले मैंने अखबारोंमें पढ़ा कि हमारे प्रेसिडेंट-

का पुत्र विली लिंकन बीमार पड़ा। चौदह-पन्द्रह सालके स्वस्थ-तगड़े लड़केको, जिसमें पूरी जीवनी-शक्ति है और जिसका शारीरिक ढांचा ठीक है, ठंड, न्यूमोनिया या बुखारसे क्यों मरना चाहिए ?

जब मैं प्रेसिडेंटके घरमें रोगीकी बात कहता हूं तो मुझे हैरानी होती है। मुझे ख्याल होता है कि वहां तो मरीजकी हैसियतके अनुसार डाक्टर काफी होंगे, दवाएं बहुत होंगी और जोखिम भी उतनी ही अधिक होगी। लंदनके फरवरी १८६२ के 'लेनसेट' पत्रमें प्रिंस एलबर्टकी मृत्युका हवाला देते हुए लिखा है—"बीमारी मियादी बुखार थी, जो शुरूमें कोई खतरनाक न थी, लेकिन यह एक ऐसा रोग है जो रईस मरीजोंमें हमेशा अधिक घातक सिद्ध हुआ है और गरीबोंमें उतना नहीं।"

सचमुच अगर मुझे अमीर बनकर दवाओंकी यातना बर्दाश्त करनी पड़े तो मेरे लिए गरीब रहना कहीं बेहतर है।

अब मैं दवाओंके बारेमें प्राप्त साक्षियोंको समाप्त करूंगा। मैंने कहा था कि जनतामें प्रचलित इलाजोंके ढंगको मैं चिकित्सकोंकी साक्षियोंसे ही झूठा सिद्ध करूंगा। एक तरहसे तो मैं परोक्ष रूपमें यह कर भी चुका हूं। पर अब मैं प्रत्यक्ष रूपसे ऐसा करूंगा। जैसे प्रमाण मैंने अबतक दिये हैं वैसे, ढेर-के-ढेर दे सकता हूं। लेकिन मेरे पास एक सबूत सबसे मजबूत है। वकील, न्यायाधीश और पंच इसी तरहके सबूतको पसंद करते हैं। इस दृष्टांतमें अमरीकाके सारे चिकित्सक अपने ही विरुद्ध वादी-प्रतिवादी बने हैं, क्योंकि उन्होंने स्वयं इलाजके अपने ढंगको सिद्धांततः और व्यवहारमें घातक स्वीकार किया है। मैं तो उनकी कही हुई बातको दोहरा भर रहा हूं।

: १३ :

एलोपैथीसे असंतोष

कुछ वर्ष पहले, शायद सन् १८५५ या ५६ में सेंट लुई स्थानमें एक नेशनल मेडिकल कन्वेंशन हुआ था। उसमें डाक्टरी पेशेके चुने हुए लोग इकट्ठे हुए थे। उनमें मेडिकल कालेजोंके प्रोफेसर, मेडिकल सोसाइटियोंके प्रेसिडेंट, प्रामाणिक साहित्यके लेखक और दूसरे अनेक प्रसिद्ध व्यक्ति थे। उनके समागमका उद्देश्य अपने देशकी ज्ञानको ऊंचा उठाना, सार्वजनिक स्वास्थ्यकी रक्षाके उपाय सोचना और अताईपनकी (अनाड़ीपन) जड़ उखाड़ना था।

तो इन लोगोंने मिलकर किया क्या ? पहले तो उन्होंने एक दावत उड़ाई और फिर एक लंबा प्रस्ताव पास किया। दावतकी बात मुझे इसलिए कहनी पड़ती है कि उसमें गरीबोंकी स्वास्थ्य-रक्षा पर विचार करनेवाले उन भले आदमियोंने चालीस तरहकी शराबों पर हाथ साफ किया।

जो प्रस्ताव जानबूझकर बहसके बाद पास हुआ वह यह था—"इस बातसे बिलकुल इन्कार नहीं किया जा सकता कि इलाजके पुराने एलोपैथी तरीकेसे लोगोंमें व्यापक असंतोष है। इस मुल्कमें और यूरोपमें बहुतसे लोग चिकित्सकोंमें और दवाओंमें बिलकुल विश्वास नहीं करते। इसकी वजह साफ है अर्थात् इलाजके सिद्धांतका गलत होना और उसमें दी जानेवाली दवाका खतरनाक और कभी-कभी घातक होना। समझदार जनताकी जरूरतें अब और दूसरी तरह पूरी न हो सकेंगी, सिवा एक ऐसे सिद्धांतके द्वारा, जिस-

की बुनियाद सही तर्क पर रखी गई हो और जो प्रकृति और जीवनी-शक्तिके त्रुटिरहित नियमोंसे संगत और समर्थित हो तथा जिसकी सच्चाईका सबूत व्यावहारिक सफलतासे प्राप्त होता हो।"

सीधी भाषामें कहें तो मतलब यह होगा कि समझदार लोग इलाजका एक ऐसा तरीका चाहते हैं, जो मरीजको आराम करे, पर मारे नहीं।

पर इन शब्दोंका असली अर्थ क्या है? क्या इनमें सच्चाई है? कब इन भलेमानसोंको मालूम हुआ कि इलाजके जिस तरीकेको वे इतने दिनोंसे अपनाये हुए हैं, वह सिद्धान्ततः त्रुटिपूर्ण और व्यवहारमें घातक है? क्या यह बात वहां सभामें आनेपर ही इन्हें सूझी या इसे वे पहलेसे जानते थे? और, अब क्या उन्होंने अपने इस हानिप्रद और घातक इलाजको बंद कर दिया है, क्योंकि यह झूठी बुनियादपर खड़ा है? मैं समझता हूं कि उन्होंने ऐसा नहीं किया और वे अभी तक उस झूठसे चिपके हुए हैं। क्या उन्हें ऐसा करते रहनेका नैतिक अधिकार है? क्या वे चाहते हैं कि उनके उस झूठे और घातक इलाजके तरीकेमें लोगोंका विश्वास बना रहे? क्या मैं और क्या आप, किसी ऐसे पेशेको करते रहेंगे, जिसे आप सिद्धांततः गलत और व्यवहारमें खतरनाक समझते हों? खासकर जबकि आप अपने पड़ोसीसे उसके लिए पैसा लेते हों?

अगर कोई चिकित्सक मामूली बुखारके इलाजमें, जिसे प्रकृति दो या तीन हफ्तोंमें खुद ठीक कर देती, मरीजके भीतर दवाओंसे आधे दर्जन पुराने रोग उत्पन्न कर दे और उतनी बार उसे मौतके मुंहमें पहुंचा दे और उसके कष्टको महीनों तक झुलाता रहे तो उसे पैसा और धन्यवाद दोनों ही इसलिए प्राप्त होंगे कि उसने

मर्जके ऐसे मोड़ोंसे रोगीको पार किया। पर यदि वह हफ्तेभरमें ही इलाज कर दे और रोगीको बिलकुल स्वस्थ बना दे तो उसे थोड़ा ही पैसा मिलेगा और धन्यवाद तो शायद ही मिले, क्योंकि रोगीकी बीमारी भारी न थी !

अधिकांश लोग आज भी दवाओंसे इलाज करनेवाले डाक्टरों-की मांग करते हैं और जबतक मांग है तबतक वे मिलेंगे ही। जब प्राकृतिक चिकित्सकोंकी मांग होगी तो वे भी मिलने लगेंगे। आजकल इलाजके तरीकोंमें सुधार करनेकी बहुत चर्चा है। कम खर्चमें बढ़िया चिकित्सक प्राप्त करानेका एक अचूक नुस्खा मैं आपको बताता हूं। अपने चिकित्सकको तभी फीस दीजिये जबतक आप अच्छे हैं। जब आप बीमार पड़ें तो उन्हें पैसे देना बंद कर दीजिये अथवा आप भले ही बीमार रहें या अच्छे, उनको सिर्फ बंधा हुआ वेतन दीजिये। आपके तन्दुरुस्त रहनेमें डाक्टरका लाभ हो, आपकी बीमारीसे उसे लाभका अवसर न मिले, तब वह प्राकृतिक चिकित्साका अध्ययन करेगा। इससे आप सचमुच तन्दुरुस्त बने रहेंगे। अब जो ढंग है इसमें तो आप मानों डाक्टरको रिश्वत देकर उकसाते हैं कि वह आपके साथ बुरा सलूक करे।

मैं समझता हूं कि आपमेंसे बहुतसे कहेंगे कि "मेरे डाक्टर तो बहुत भले आदमी हैं और विद्वान हैं, मुझे उनपर पूरा विश्वास है।" पर डाक्टर तो खुद ही कह रहा है कि उसका तरीका गलत है। आपका एतबार डाक्टर पर है या इलाजके उसके तरीकेपर ? आपकी यह हालत तो दयनीय है। अगर उसपर विश्वास है तो उससे सलाह भर लीजिए, बुरी दवा क्यों लेते हैं ?

हम तो चिकित्साके पेशेवरोंको इलाजका वह तरीका देना चाहते हैं, जिसकी उसके अपने कथनानुसार समझदार जनताको

मांग है। लेकिन यह पेशा तो उसे अपनाने या उसकी परीक्षा करनेसे भी इन्कार करता है। प्राकृतिक चिकित्साके अनुयायियोंको तो पेशेवर डाक्टर फूटी आंख भी नहीं देखना चाहते और उन्हें अताई, कठमुल्ला और विचारोंके दरिद्री कहकर उनकी खिल्ली उड़ाते हैं। वास्तवमें देखा जाए तो विचारोंके दरिद्री प्राकृतिक चिकित्सक नहीं, बल्कि डाक्टर ही हैं। दवाओंसे इलाज क्या है? यह तो उस आदमीको, जो बीमार पड़ा हो, जहर से सींचना है। कहनेको तो दो हजार दवाएं हैं, पर हैं वे सब जहर, मानों धरती और समुद्रका सारा कचरा सिमटकर दवा के रूपमें इकट्ठा हो गया हो? किसी एकको अलग कीजिये तो भी वह जहर है और किसी रोगीको अत्तारकी सारी दूकान घोटकर पिला दीजिये तो वह पूरा कालकूट या जहरका पहाड़ ही है। आगे-पीछे, दायें-बायें, यह तो विष-पान ही है।

जैसा मैं पहले कह चुका हूं, प्राकृतिक इलाजके साधनोंमें विषोंको छोड़कर संसारकी और सब वस्तुएं शामिल हैं। दवाओंसे इलाजका तरीका जहरोंको लेकर और सब चीजोंको छोड़ता है। हमारा तरीका जहरोंको छोड़कर और सबको अपनाता है।

अब इन बातोंको खत्म करके मैं प्राकृतिक चिकित्साके सिद्धांत और आधारोंके बारेमें कुछ कहूंगा।

: १४ :

अचूक कसौटी

मैं आपको विचारकी एक अचूक कसौटी बतलाता हूं, जो चिकित्साकी सब समस्याओंको सुलझानेमें सहायक होगी, जो सब तरहके रोगोंको ठीक करनेमें काम दे सकती है। यह कसौटी और यह नियम सब जीवधारियोंके शरीरके नियमोंके साथ जुड़े हुए हैं। विचारके किसी निश्चित—न बदलनेवाले और प्रत्यक्ष—नियमके बिना हमारी सब कतरब्योंत बेकार है। उस स्थितिमें हम तथ्यों-का गलत इस्तेमाल कर सकते हैं, अनुभवकी गलत व्याख्या कर सकते हैं, हमारे निरीक्षणमें धोखा हो सकता है और हमारा तर्क भी गड़बड़ हो सकता है।

चाहे कोई फरिश्ता ही बादल की कड़क बनकर कुछ कहे, चाहे बिजलीकी कौंधके रूपमें ईश्वर ही हमारे पास सन्देश भेजे, पर उसके पीछे व्याख्याका यदि कोई निश्चित नियम नहीं है तो उसे सिर्फ बादलकी गरज और बिजलीकी चमक ही कहा जायगा। पर यदि हमें घटनाएं घटनेके नियमका ज्ञान है तो हम विज्ञानकी सारी सामग्रीका ठीक इस्तेमाल करेंगे और गलतीसे बचेंगे। हम सब वस्तुओंका सदुपयोग करेंगे, दुरुपयोग किसीका नहीं।

जड़ पंचभूत और चैतन्ययुक्त प्राणीके परस्पर सम्बन्धको, जहांतक उनके सिद्धांत और मतोंका प्रस्तुत विषयसे सम्बन्ध है, ठीक तरह न समझना ही चिकित्सक शरीर-विज्ञाने, रासायनिक, दार्शनिक, मनोवैज्ञानिक, तत्त्वचिंतक और धर्मगुरुकी भारी भूल

कही जायगी। उन्होंने अपने सिद्धांत और मत झूठी बुनियादपर खड़े किये हैं, जिसमें प्रकृतिके नियमका क्रम उलट-पुलट गया है। नींवके गलत होनेपर इमारत कभी सही नहीं हो सकती।

चिकित्साके स्कूलों और पुस्तकोंमें सिखाया जाता है कि दवाएं—अम्ल, क्षार, नमक, मिट्टी, खनिज और उनके अनेक प्रकार—जो मरे हुए, जीवन-शून्य पदार्थ हैं, जीवनयुक्त शरीरको प्रभावित करते हैं। प्रकृतिकी शिक्षा इससे ठीक उल्टी है। इसके अनुसार जीवित शरीर दवापर प्रभाव डालता है।

चिकित्साके स्कूलों और पुस्तकोंमें सिखाया जाता है और इलाजका सारा तरीका इसी विचारपर अवलंबित है कि खास दवाएं अपने उन समस्त गुणोंके कारण शरीरके भिन्न-भिन्न अवयवों और भागोंपर असर डालती हैं। प्रकृतिकी सीख इससे उलटी है। प्रकृति सिखाती है कि दवाओंका जीवित तंतुओंके साथ सम्बन्ध, समान आकर्षणका नहीं, विरोधका है।

: १५ :

संस्कार

हमारी भाषामें कोई शब्द इतना भ्रामक नहीं जितना कि यह छोटा शब्द 'संस्कार' (impression)। दार्शनिकोंने भी इसके अर्थके बारेमें हमेशा भूल की है। रोग और उनके निवारणके शास्त्रमें तो इस शब्दके उलटे अर्थसे बीमारीकी असलियत-के बारेमें एक गलत सिद्धांत ही बन गया है। दवाओंका जो असर होता है, उसके बारेमें भी झूठा मत फैलाया गया है अर्थात् चिकित्सा-विज्ञान और इलाज इन दोनों क्षेत्रोंमें गलती हुई है।

संस्कारका क्या अर्थ है ? किसी बाहरी वस्तुका शरीर या मन पर जो प्रभाव है, उसे संस्कार नहीं कहते जैसा कि डाक्टर और दार्शनिक बताते हैं। इससे ठीक उलटा अर्थ यह है कि जिसके अनुसार शरीर और मन बाहरी वस्तुके प्रभावको स्वीकार करते हैं। संस्कारसे जो प्रभाव उत्पन्न होता है, वह जीवित संस्थानका उस वस्तुपर असर डालना है, न कि उस वस्तुका जीवित संस्थानपर। किसी जीवन-शून्य वस्तुका कोई कार्य या प्रभाव संस्कार नहीं कहा जायगा, बल्कि जीवनीशक्ति या मनके द्वारा उस वस्तुके प्रभावको स्वीकार करना ही संस्कार है। अगर मेरी यह परिभाषा ठीक है तो चिकित्सकोंने तीन हजार वर्षों तक जिन सिद्धांतोंको रोग और इलाजके बारेमें बताया है, वे सच्चाई और प्रकृति दोनोंके बिल्कुल विपरीत हैं।

बैरन कूवियेर (Baron Cuvier) ने कई विज्ञानोंकी सीमाएं

बताते हुए अपने बड़े ग्रन्थ 'एनीमल किंगडम' में कहा है, "बाहरी वस्तुओंका मनपर संस्कार डालनेका प्रकार एक अज्ञात रहस्य है।" मुझे तो इस समस्याको सुलझाना है, अन्यथा मैं आगे नहीं बढ़ सकता। इस अज्ञात रहस्यका भेदन मुझे करना ही चाहिए, क्योंकि जीवन, स्वास्थ्य, रोग और इलाजके बारेमें मैं जो कुछ भी जानता हूं या सिखानेका दावा करता हूं, वह सब इसी विषयके ज्ञानपर निर्भर है।

सच तो यह है कि बाहरी वस्तुएं मनपर कोई संस्कार नहीं डालतीं। जीवन-शून्य भौतिक पदार्थ जीवित-संस्थानको प्रभावित नहीं करते, बल्कि उनकी प्रतिक्रिया होती है। यह मन ही है, जो इन्द्रियोंके द्वारा बाहरी वस्तुओंकी सत्ताको देखता है और उनके साथ शरीरके सम्बन्धको जानता है। यही उस अज्ञेय पहेलीका समाधान है, जिसका पहले उल्लेख हुआ है। इसे समझ लेनेपर प्रकृतिका सब कार्य अचरजभरे ढंगसे सरल जान पड़ता है।

जीवनीशक्ति और मनके द्वारा विहित संस्कारोंमें एक अंतर है। जीवनीशक्ति या शरीरके अवयव बाहरी वस्तुओंका ज्ञान उन वस्तुओंके शरीरके सम्पर्कमें आनेपर करते हैं, लेकिन मन तो बाहरी वस्तुओंका ज्ञान उनके दूर रहते हुए भी कर सकता है। जीवनीशक्ति हमारा सम्पर्क आहार या विषोंसे कराती है, अर्थात् उन वस्तुओंसे जो हमारे लिए लाभप्रद या हानिकारक हैं। मानसिक वृत्तियों या शक्तियोंसे हम बाहरी पदार्थोंके सम्पर्कमें आते हैं।

बाहरी वस्तुएं जीवनीशक्तिपर काम करती हैं, इस मतसे बहुतसे ऊल-जलूल इलाज और त्रुटिपूर्ण सिद्धांतोंका जन्म हुआ है। कहा जाता है कि रोशनी आंखपर, शब्द कानपर, हवा फेफड़ोंपर, खुराक पेटपर, बीमारियां खून और नसोंपर तथा दवाएं

शरीरके भिन्न अवयवोंपर काम करती हैं। लेकिन इस प्रकार जड़ वस्तुओंके चेतनको प्रभावित करनेके विचारकी छानबीन की जाय तो इसमें एक यांत्रिक प्रक्रियाके सिवा कुछ सार नहीं है। जीवन-रहित वस्तुका जीवित संस्थानपर कार्य या असर कुछ अर्थ नहीं रखता। वह कुछ अवयवोंमें या उनके जुज़ोंमें केवल गड़बड़ी पैदा करता है।

देखनेके सिद्धांतकी व्याख्या करते हुए वैज्ञानिक बताते हैं कि रोशनीकी किरणें देखी हुई वस्तुसे आंखपर फेंकी जाती हैं और पुतलीपर उस वस्तुका चित्र बनाती हैं। लेकिन इससे यह सवाल हल नहीं होता कि मस्तिष्कको उस वस्तुका ज्ञान कैसे हो जाता है। हमें बताया जाता है कि वस्तुका वह चित्र देखनेवाली नसके द्वारा मस्तिष्कके किसी खास हिस्सेपर पहुंचाया जाता है। यह सब मान लेनेपर भी देखनेकी क्रियाकी यथार्थ व्याख्या नहीं हो पाती।

इस ख्यालसे कि पुतलीपर जो आखिरी छाप पड़ती है, वह सबसे साफ पड़नी चाहिए और देखनेवाली नसपर जो प्रभाव पड़ते हैं, वे बाहरी या सिर्फ यान्त्रिक हैं—जो समुद्रमें उठनेवाली लहरोंकी तरह एक-दूसरेको मिटा देते हैं। कुछ लोगोंने खूनी को पकड़नेके लिए अणुवीक्षण यंत्रके इस्तेमालकी सलाह दी है। यह सोचा गया कि मृत व्यक्तिकी पुतलीपर मारनेवालेका ही अक्स सबसे अंतमें पड़ा होगा जोकि अणुवीक्षण यंत्रमें साफ नज़र आ सकेगा। एक जगह कुछ वर्ष पहले यह प्रयोग करके भी देखा गया पर, जैसा होना था, उसका कोई नतीजा न निकला।

इसी आधार पर कि दवाएं अपनी निजी शक्ति या गुणोंसे जीवित शरीरपर प्रभाव डालती हैं और उनके ये गुण स्वयं उस

अवयव या शरीरके भागको चुन लेते हैं, जिसपर वे असर डालेंगे, इलाज करनेवालोंने दवाओंको इन वर्गोंमें बांटा है— वामक (emetic), जो मेदे पर काम करती है; रेचक(purgative), जो आंतों पर काम करती है; परिस्वेदक (diaphoretic), जो त्वचापर काम करती है; मूत्रक (diuretic,) जो गुर्दोंपर काम करती है, कफोत्सारक (expectorant), जो फेफड़ोंपर काम करती है; पित्तोत्सारक (cholagogucs), जो यकृतपर काम करती है; उत्तेजक (stimulant), जो रक्त-धमनियोंपर काम करती हैं; वातवर्द्धक (tonic), जो मांसपेशियोंपर काम करती है; मादक (narcotic), जो मस्तिष्क पर काम करती है; यह वर्गीकरण संभाव्य लगता है, पर इसमें सच्चाई नहीं है।

ज्योतिषशास्त्रसे अनभिज्ञ व्यक्ति समझता है कि सूर्य पूर्वमें निकलकर पश्चिममें अस्त होता है और २४ घंटे में पृथ्वीके चारों ओर घूम जाता है। यह उसे आंखसे दिखाई पड़ता है पर गुरुत्वाकर्षणके नियमको जान लेनेके बाद वह साफ समझ लेता है कि जो उसने आंखोंसे देखा वह मिथ्या था और सचमुच तो पृथ्वी ही अपनी धुरीपर घूमती है और सूर्य स्थिर है।

ऐसे ही जीवनी-शक्तिके नियमको जान लेनेपर चिकित्सक यह भी जान लेंगे कि सचेतन संस्थान ही प्रभाव डाल सकते हैं, जड़ या मृत वस्तुएं जीवितके सामने निष्क्रिय हो जाती हैं। वे स्वयं कुछ नहीं कर सकतीं और निष्क्रिय पड़ी रहती हैं।

जीवित संस्थान खुराकको पचाकर उसे अवयवों और तंतुओंके निर्माण और मरम्मतमें लगाता है, इसीको पाचन और पोषण कहते हैं। इसी प्रकार जीवितसंस्थान जड़ी बूटी, दवा, विष गंदगी, मादा, कीटाणु और छूत आदिपर अपना प्रभाव डालता

है कि उनका मुकाबला कर सके, उन्हें छांट सके,। अहितकारीको निकालकर हितकारीको ले सके और अपनी सफाई कर सके। यह सफाई उस स्थितिमें सबसे उपयुक्त मार्गोंसे होती है।

सारक द्रव्य वे हैं, जो आमाशयपर असर नहीं डालते बल्कि आमाशय जिन्हें बाहर फेंकता है। रेचक वे हैं जो आंतोंपर असर नहीं डालते, बल्कि आंतें जिन्हें फेंकती हैं। स्वेदक द्रव्य वे हैं जो त्वचापर असर नहीं डालते, बल्कि त्वचा, जिन्हें रोमकूपोंसे बाहर निकालती है। मूत्रल द्रव्योंका गुर्दोंपर असर नहीं होता, बल्कि गुर्दे ही उनके विषको बाहर निकालते हैं।

विषोंको शरीरसे बाहर निकालनेकी प्रक्रिया ही बीमारी है। इससे रोगके स्वरूपकी समस्या हल हो जाती है।

रोगकी वास्तविकता और दवाओंकी कार्य-विधिकी जो व्याख्या मैंने की है, वही सच्ची है। औषधि-विज्ञानमें वर्णित दवाओंकी मददसे हम शरीरमें सब रोग पैदा कर सकते हैं। ब्रांडी, काली मिर्च और कुनैनको मिलाकर लेनेसे स्वस्थ मनुष्यमें सूजन और बुखार पैदा हो जायगा। कैलोमल, शोरा और अफीमसे मियादी बुखार, Nitre antimony digitalis से एशियाई हैजा, काड लीवर आयल, नमक और गंधकसे खुजली, रेंडीतेल एपसम साल्ट और बहुत-सी दस्तावर चीजोंसे दस्त आने लगते हैं। भांग, तम्बाखू और दूसरी दवाओंसे मचली पैदा हो जाती है। चिकित्सा-विज्ञान और नीरोगिता-विधिकी दृष्टिसे दस्त और मचली क्या हैं, सिवा इसके कि जीवित शरीर सफाईके लिए उन विषोंको बाहर निकालना चाहता है। इसीको हम बीमारी कहते हैं!

अगर कोई व्यक्ति छींककी प्रक्रियाकी ठीक व्याख्या कर सके तो मैं कहूंगा कि उसने हमारी समस्याओंकी कुंजी पा ली है।

क्या गर्द या सुंघनी नाकमें छींक पैदा करती है या नाक गर्द और सुंघनीको छींकसे बाहर निकालना चाहती है ? किसे बाहर फेंका जाता है और कौन बाहर फेंकता है ? छींक रोगका लक्षण है या स्वास्थ्य का ? कोई यह नहीं कहेगा कि यह एक स्वाभाविक अवस्था है। जबतक नाकमें कोई विशेष बात नहीं होती, छीक नहीं आती। छींकका आना सफाईका एक प्रयत्न है, वैसे ही, जैसे दस्त, हैजा या ज्वर सफाईके प्रयत्न हैं।

बीमारियोंके सफल इलाजके नियमोंको हम उपर्युक्त प्रकारसे समझ सकते हैं। बीमारी सफाईकी क्रिया है, इसलिए मैं उसे दबाना न चाहूंगा, बल्कि उसके कामको नियमित करना चाहूंगा। मैं जोर-जबरदस्तीसे उसे भगाना पसंद नहीं करूंगा, बल्कि उसके रुखको सही दिशामें मोड़ना चाहूंगा। जबतक उसका यह कार्य, गंदगी हटानेवाले अवयवों, विशेषतः त्वचाकी ओर मुड़ता है, तब-तक मरीज सही-सलामत रहता है। जब सफाईका यह प्रयत्न त्वचा-से हटकर किसी भीतरी अवयवकी ओर मुड़ जाता है तब मरीजके लिए खतरा हो जाता है। इसलिए बीमारीको दूर करनेका नियम यह है कि सफाईका यह प्रयत्न इस प्रकार संतुलित किया जाय कि हर अंगको अपना उचित काम सम्पन्न करना पड़े और कोई अवयव अधिक कामके कारण त्रस्त न हो। सफाईके इस कामको व्यवस्थित और नियंत्रित करनेके लिए हमें रक्त-प्रवाहको ठीक करना होगा और इसे संतुलित करनेके लिए तापमानको उचित करनेकी जरूरत होगी, न कि दवाकी, वैसे ही जैसे कि किसी व्यक्तिको चलनेमें मदद देनेके लिए उसके पैरके अंगूठेको काटने-फाड़नेकी जरूरत नहीं, उसे तो सहायक वस्तुयें चाहिएं, बाधक नहीं।

अपनी बात समझानेके लिए मैं एक और मिसाल दूंगा। हालमें मैंने एक अखबारमें पढ़ा कि पेरिसके किसी सर्कसमें एक अजगरने, जो बहुत दिनोंसे भूखा था, एक कंबल निगल लिया। चार-पांच हफ्तों तक पेटमें रखनेके बाद उसने कंबलको फिरसे उगल दिया।

प्रश्न यह है कि कंबलने सांपपर काम किया या सांपने कंबल पर ? कंबलको पेटसे वापस बाहर फेंकना, यह शरीर-विज्ञानकी प्रक्रिया नहीं है। साधारणतः कोई अजगर ऐसा करते नहीं पाया जाता। तब क्या यह रोग-विज्ञानकी प्रक्रिया थी ? कंबल उसकी बीमारीका कारण था। वह उसके भीतर अवरोध उत्पन्न कर रहा था और अवरोध-रूपी उस बीमारीमें मचली द्वारा सांपके शरीरने उस कंबलको बाहर निकाल दिया ? क्या कंबलको बाहर फेंकने-की इस प्रक्रियाको दवाना चाहिए था ?

जीवनी-शक्तिके सब कार्य दो हिस्सोंमें बांटे जा सकते हैं। एकके द्वारा आहारसे मांसपेशियां और तंतु बनाये जाते हैं और फुजला बाहर फेंका जाता है। इसे स्वास्थ्य या शरीर-विज्ञान कहते हैं। दूसरेसे विजातीय द्रव्य या बेकार माद्दा बाहर निकाला जाता है और शरीरकी मरम्मत की जाती है। यह बीमारी या रोग-शास्त्र है।

कुछ लेखक दवाको रोग अच्छा करनेका कारण बताते हैं। दूसरे लेखकोंका मत है कि प्रकृति रोगोंको अच्छा करनेवाली है। दोनों ही गलतीपर हैं। रोगोंको अच्छा करनेवाली प्रकृति क्या है ? यह आत्म-रक्षाके लिए जीवनी-शक्तिका संघर्ष है। यह सफाईकी प्रक्रिया है, जिसे रोग कहते हैं। रोग और इलाज करने-वाली प्रकृति ये आपसमें लड़नेवाली शक्तियां नहीं हैं, बल्कि दोनों

एक ही हैं। अगर समस्याका यह समाधान सही है तो यह बात साफ है कि दवाओंसे बीमारीको हटाना जीवनी-शक्तिको ही हटाने या मिटानेके समान हैं। प्रो० क्लार्क (Professor Clark) के इस कथनकी सच्चाईको कि दवाकी हरेक खुराक मरीजकी जीवनी-शक्तिको घटाती है, हम अब समझ सकते हैं।

प्रकृतिकी इलाज करनेकी शक्ति और बीमारी दोनों एक ही हैं। इस सिद्धांतकी घोषणा और यह मानना कि स्वस्थ करने-वाली एवं उसका वह रूप भी जो मारक बनता है, एक ही है। यह बात पहले कुछ अजीब-सी लगती है। प्रायः सभी नये सत्य जो उन पुराने सिद्धांतोंके विरोधमें आते हैं, जिन्हें लोग बहुत दिनसे मानते रहे हों, ऐसे ही होते हैं। चिकित्सकों के लिए इस विचारको स्वीकार करना बहुत कठिन और किसी-किसी अंशमें असंभव ही है, क्योंकि यह उनके पुराने विचारोंके और उनकी पोथियोंमें लिखी हुई मान्यताओंके सरासर खिलाफ है। उनके मनमें यह बात मुद्दतसे जमी हुई है कि बीमारी और स्वस्थ करनेवाली प्रकृति एक-दूसरेके शत्रु है। घंटों उनसे बातें करने और उनकी सब शंकाओंका जवाब देनेके बाद भी मैं उनके वहमोंको पूरी तरह न हटा सका। खुद मेरे छात्र-छात्राओंको इसे पूरी तरह समझनेके लिए महीनों जूझना पड़ा है।

जब हार्वीने रुधिरके परिभ्रमणका वह सिद्धांत खोज निकाला जिसके पीछे डाक्टर लोग सत्रहसौ सालोंसे भटक रहे थे, तो उसने पेशेवर लोगोंकी अंधी इज्जतोंसे डरकर बहुत वर्षों तक अपने आविष्कारको प्रकट ही नहीं किया। जब दस वर्षोंकी जांच-पड़तालके बाद उसने इस सच्चाईको खोला तो चिकित्सक बिरादरी-ने उसपर गालियोंकी बौछार की और वह अन्य प्रकारसे भी सताया

गया। कहा जाता है कि चालीस वर्षसे ऊपरके बड़े-बूढ़ोंमें से एकने भी हार्वीकी आविष्कृत सच्चाईको मंजूर नहीं किया।

अगर हार्वीके आविष्कारोंको, जिसके कारण पेशेवर लोगोंको कुछ घाटा नहीं उठाना पड़ा और इलाजके तरीकोंमें भी जिसने ज्यादा छेड़-छाड़ नहीं की, ऐसा तीखा विरोध सहना पड़ा, तो हमें कौन-सी जोखिमका सामना करना पड़ेगा, जबकि हम एक ऐसे सिद्धांतकी घोषणा करने चले हैं, जो न सिर्फ इलाजके सारे तरीके-को ही वदल डालनेवाला है, बल्कि इलाज करनेवाले पेशेकी जड़पर ही कुठाराघात करना चाहता है।

: १७ :

रोगोंके भेद

यहां रोगोंके भेदोंके बारेमें भी कुछ कहना आवश्यक है। यह चिकित्सा-विज्ञानका एक उलझा हुआ प्रश्न है। मैं किसी ऐसे लेखकको नहीं जानता, जिसने इसकी व्याख्याका प्रयत्न किया हो। जब बीमारीकी असलियतकी ही ठीक जानकारी न हो तो उसके भेदोंका तो ठीक पता लग ही कैसे सकता है? हमारे लेखक सिर्फ इतना ही जाननेका दावा करते हैं कि बीमारियां बहुत तरहकी होती हैं। वे क्यों होती हैं और कैसे आती हैं, यह उनके लिए अनबूझ पहेली है।

उदाहरणार्थ, लोगोंको इतनी तरहके बुखार क्यों होते हैं? कुछ सूजनवाले, कुछ पित्तज, कुछ मियादी, कुछ तिजरिये, चौथइए और कुछ लगातार रहनेवाले। एक क्यों होता है, दूसरा क्यों नहीं होता है? बुखार क्यों होता है सूजन क्यों नहीं? हैजा, ऐंठन, कब्ज, यक्ष्मा, इनमें से कोई एक क्यों हो जाता है, दूसरा क्यों नहीं? इन सवालोंका जवाब इस प्राथमिक समस्याके समाधानपर निर्भर है कि सूजन क्या है, बुखार क्या है और इनका जवाब भी उसी मूल समस्यासे टकराता है कि बीमारीकी असलियत क्या है?

अगर मूल आधारका सही पता हो तो इन सब विषयोंको समझनेमें दिक्कत न होगी।

कुछ बीमारियां, जैसे खसरा, चेचक, सुर्ख बुखार, आदिके बारेमें नये लेखक समझते हैं कि वे आत्म-सीमित हैं

(Self-limited)। बोस्टनके डा० बिगलोंने अपने एक ग्रन्थमें (Nature in disease) कहा है—"सीमित बीमारी से मेरा तात्पर्य उस रोगसे है, जो अपने लिए स्वयं अपना नियम बनाता है, बाहरी प्रभावोंसे प्रभावित नहीं होता, अर्थात् ऐसा रोग, जो एक बार शरीरमें अड्डा जमा लेनेपर किसी दवा-दारूसे निकाला नहीं जा सकता और न कम किया जा सकता है।"

न जाने कबतक चिकित्सक लोग इस बातकी उधेड़बुनमें अपना सिर खपाते रहेंगे और बिना अस्तित्व-वाले रोगका स्थान ढूंढ़ते रहेंगे, अथवा उस रोगका जिसका कोई नियत स्थान नहीं है? डाक्टरोंका अपने दिमागी अणुवीक्षण यंत्रको बुखारके स्थान-विशेषकी खोजमें शरीरके किसी अवयवपर लगाना ऐसा ही है, जैसा विद्युत् शक्तिकी खोजमें किसी सेनापतिका अपनी दूरबीनको चन्द्रमाकी ओर मोड़ना।

बुखारबहुत तरहके होते हैं और सफाईके तरीके भी उतने ही हैं। जिस आदमीका ढांचा तगड़ा है और जिसके भीतर बहुत माद्दा जमा नहीं है, उसके शरीरमें सफाईकी प्रक्रिया सिर्फ ऊपरी सतह पर रहेगी। उसे बुखार लगातार रहेगा और उसमें सूजन होगी। जिसके शरीरमें गंदगी बहुत है उसके शरीरमें ज्वरकालमें दुर्गंध होगी। जिसकी शरीर-दशा कुछ कम स्थूल और निर्बल होगी, उसे नस-नाड़ियोंका ज्वर अर्थात् मियादी बुखार होगा। जिन्हें अधिक समय तक मलेरिया आदि का सामना करना पड़ा है और जिनका यकृत या सफाईके दूसरे अवयव माद्दसे भर गये हैं और सुस्त पड़ गये हैं, उन्हें अन्तर देकर आनेवाले तिजरिये, चौथइये आदि

बुखारोंका सामना करना पड़ेगा। मेरे पास इतना समय नहीं है कि इनकी अधिक व्याख्या कर सकूं, किन्तु मैंने उस सिद्धान्तका इशाराभर कर दिया है, जिससे जीवनी-शक्तिके ह्रास और बीमारीके सब भेदोंके कारणोंकी व्याख्या हो सके।

: १८ :

प्रकृतिके इलाजका तरीका

कहा जाता है कि प्रकृतिके पास इलाजका एक तरीका है। यह भी एक उलझा हुआ प्रश्न है, जिसपर, हमें अपने दिमाग साफ करने चाहिए। क्या है वह इलाजका तरीका ? एलोपैथ कहते हैं "जो जिसके विरुद्ध है, वह उसकी काट करता है या अच्छा करता हैं।" होमियोपैथ कहते है, "जो जिसके समान है वह उसे दूर करता है या अच्छा करता है।" समन्वयवादी कहते हैं कि अच्छा करने का नियम सौम्य औषधियोंमें है। शरीर-विज्ञानके अनुसार चिकित्सा करनेवाले कहते हैं कि इलाजका यह नियम तब पूरा होता है जब शरीर-विज्ञानकी सूक्ष्म प्रक्रियाओंके अनुकूल दवाएं दी जायं।

सभी गलतीपर हैं। सारी दुनियामें अच्छा होनेका ऐसा कोई नियम नहीं है। प्रकृतिने इस तरहकी कोई बात नहीं रखी है। प्रकृति तो दंडका विधान करती है, इलाजका नहीं। क्या आप समझते हैं कि एक तरफ तो प्रकृति या ईश्वर नियम-अतिक्रमणके लिए दंडका विधान करे और फिर उस सजासे बचनेके लिए इलाजका नियम रखे ? क्या कुदरत इस बातको गवारा कर सकती है कि जीवनके नियमोको तोड़नेके लिए एक ओर रोग और कष्टको सही व्यवस्थाके रूपमें रखे और दूसरी ओर डाक्टरोंकी दवाओंसे उस सजाको हटानेकी छूट दे ? अच्छा होनेकी सिर्फ एक ही शर्त प्रकृतिने रखी है—और यह है उसके नियमों की पाबंदी।

यदि प्रकृतिने अच्छा होनेका या इलाजका कोई तरीका नहीं बनाया तो उसने दवाएं भी नहीं बनाईं। तो दवाओंके पोथे और उनकी दो हजार दवाओंका क्या बनेगा ? और क्या होगा इन हजारों नीम-हकीम अताइयोंका, जो अखबारमें अपने झूठे विज्ञापन छपाकर रोगियोंसे लाखों-लाख रुपये लूटते हैं। डाक्टर और अताई दोनों झूठे हैं और एककी जड़ कटनेपर दूसरा भी उसी रास्ते जायगा।

मैंने बहुत-से डाक्टर विद्वानोंसे पूछा है कि दवाएं कैसे काम करती हैं। और अच्छा करनेका नियम कैसे क्रियाशील होता है, इस बातको वे मुझे समझायें। क्यों और कैसेकी बुद्धिपरक संगति क्या है ? पर उनमेंसे एक भी मुझे कुछ न बतला सका। हरेक यही कहता रहा कि जिस तरीकेसे मैं दवा देता हूं, वही तजुर्बेमें सबसे अच्छा है। किसीने भी इस मौलिक प्रश्नपर कभी गौर नहीं किया। दवाका कोई भी तरीका सही है क्या ? अनुभवकी दुहाई देनेवालोंसे सवाल होगा कि अनुभव है क्या ? जो हो चुका है, उसीका लेखा अनुभव है। इससे यही तो मालूम होता है कि आपने क्या किया, न कि क्या करना चाहिए था। समूची दुनियाके सारे पेशेवर डाक्टरोंके अनुभवकी मैं कानी कौड़ी जितनी भी कद्र नहीं करता हूं जबतक कि उसका आधार प्रकृतिका कोई माना हुआ नियम न हो और किसी प्रत्यक्ष सिद्ध होनेवाले नियमसे उसकी व्याख्या न की जा सके। डाक्टर दवा-दारूके जरिए तीन हजार वर्षों तक लोगोंको अच्छा करते (मारते) रहे और उनका अनुभव उन्हें सच्चाई और प्रकृति दोनोंसे बराबर गुमराह करता रहा। यदि एक दर्जन आदमी किसी बुखारसे एक, दो या तीन महीने बीमार रहें और डाक्टर आधी दर्जन दवा हर रोज आधी दर्जन बार देता रहे और अंतमें

आधे मरीज मर जायं और आधे अच्छे हो जायं तो सवाल हो सकता है कि इसमें दवा ने क्या किया ? दवा देनेवाले यही मानेंगे कि जो बच गये वे दवाओंसे बचें और जो मर गये वे दवाएं देनेपर भी मरे । लेकिन यदि दूसरी दृष्टिसे देखा जाय तो कहेंगे कि जो मरे उन्हें दवाओंने मारा और जो बच गये वे दवाओंके बावजूद बचे । यह है डाक्टरी अनुभवकी असलियत ।

डा० बिगलो का कथन है कि दवाओंका प्रभाव और बीमारी, ये दोनों एक दूसरेके साथ इतने मिल गये हैं कि मनको उन्हें अलग करनेमें कठिनाई मालूम होती है । वस्तुतः बात ऐसी ही है । उन्हें अलग नहीं किया जा सकता । दवाओंका प्रभाव ही रोग है ।

: १६ :

दवाएं क्या हैं ? विष

दवाएं क्या है ? जड़ी-बूटियां, रासायनिक द्रव्य और अनेक नामों और किस्मोंके विष । क्या हरेक इलाजके तरीकेमें अपना प्रिय विष नहीं है ? एलोपैथी संखियेको बहुत अच्छा समझती है। होमियोपैथी नक्सवोमिका को प्रशंसनीय स्नायुवर्द्धक पदार्थ मानती है। प्रो० पेनका कहना ठीक है, "हम एक बीमारीको अच्छा करनेके लिए दूसरी बीमारी पैदा करते हैं ।"

इसका सबूत दिया जाना चाहिए कि अमुक-अमुक रोगके मरीजोंका अमुक इलाज है। चिकित्सक यह कैसे करेंगे ? वैसे ही, जैसे विष वैद्य करते हैं। अच्छे आदमियोंको जहर देकर जहरके असरको देखते हैं। डाक्टर भी अपनी दवाओंके बारेमें वही करेंगे ।

ये दवाएं भले-चंगे आदमीको दी जानेपर उसे मचली, कै, दस्त दर्द, दाह, सूजन, ऐंठन, शूल, बेहोशी, सन्निपात और मृत्युके आसार पैदा करती हैं और बीमारोंको दी जानेपर भी रोगके उन्हीं रूपोंको मरीज और मर्जकी हालतके अनुसार पैदा करती हैं। क्या डाक्टरों जैसा और भी कोई वर्ग दुनियामें है ? यदि चिकित्सक अच्छी नीयतसे दवारूपी एक जहर एक या सैकड़ों रोगियोंको देता है और वे मर जाते हैं तो कहते हैं कि दवा रोगीको बचा न सकी .लेकिन अगर कोई बदमाश बुरे इरादेसे वही दवा देकर किसीके मार डालता है तो कहा जाता है कि

अमुकको जहरदेकर मार दिया। लेकिन औषधदाताद्वारा जीवनी-शक्तिके प्रति उसके व्यवहारमें तो कोई फरक नहीं पड़ता।

मैं वकीलोंके सामने बोल रहा हूं। यदि इस तरहकी साक्षी और तर्क अदालतमें दिए जायं तो क्या देनेवाला पागल न समझा जायगा? क्या वजह है कि सारे सभ्य संसारमें अनेक बीमारियोंमें विषतुन्दुकी (Strychnine) का प्रयोग बढ़ रहा है, जो कि अत्यंत घातक द्रव्य है और जिसे घटिया किस्मकी व्हिस्की और तम्बाकूमें तेजी लानेके लिए मिलाया जाता है और जिसे डालकर अपराधी कुओंको विषाक्त कर देते हैं तथा जिससे सुअरोंमें हैजा उत्पन्न किया जाता है। लकवेकी बीमारीमें इसे सब देने लगे हैं और सर्वसंग्रही इलाजके हामी तो इसे कब्जकी अच्छी दवा बताने लगे हैं। पिछले साल एक पादरीने अपनी स्त्रीको यह दवा दी थी तो उसे फांसीकी सजा हुई थी। एक बार मैंने भी एक पागल कुत्तेको इसकी एक खुराक दी थी और वह खत्म हो गया था।

कुछ सप्ताह पहले एक राज्यमें मैंने एक सुन्दर शहर देखा, जो अत्यन्त स्वास्थ्यप्रद था। वहां अपने भाषणोंमें मैंने कहा, "यहां तो डाक्टर न होंगे।" पर मुझे मालूम हुआ कि वहां भी बुखार, न्यूमोनिया और यक्ष्मा जैसे रोग प्रचलित थे। वहां पहुंचनेके कुछ ही मिनट बाद एक शवका जुलूस देखा, जिसमें डिप्थीरियासे एक सुन्दर लड़कीकी मृत्यु हुई थी।

मित्रो, मेरे साथ अपने मनमें किसी कब्रिस्तानकी यात्रा कीजिये, जो नित्य नई कब्रोंसे भरता जा रहा है। वहां लाये हुए शवों से पूछिये कि कैसे और क्यों उनकी मृत्यु हुई तो उनसे क्या जवाब मिलेगा?

क्या दस्तोंके कारण उस हँसते हुए बच्चेकी मौत हुई? क्या

सुर्ख बुख़ारने उस सुन्दर बालकको वहांतक पहुंचाया ? क्या गठियाने इतनी जल्दी उस जवानको वहां लाकर लिटा दिया ? क्या मियादी बुखारने उस तगड़े मनुष्यको इस अन्तिम दिशामें पहुंचा दिया ? क्या सिर्फ बच्चा देनेके कष्ट और हल्की ठंडने उस अधेड़ स्त्रीको संसारसे यों अचानक विदा कर दिया ? या इनके पीछे किसी ईश्वर अथवा दुर्घटनाका हाथ था ?

नहीं-नहीं, मनुष्य इतनी जल्दी और ऐसी छुई-मुई बीमारियों-से नहीं मरते। मेरा दावा है कि ऐसा नहीं होता। अगर ये लोग बोल सकते तो पुकार-पुकारकर कहते कि वह बच्चा दवामें दिये गए सुरमेका शिकार हुआ। यह बालक कैलोमल (पारेसे बनी दस्तावर दवा) और अफीमका शिकार हुआ। यह जवान शोरा और नागफनी (digitalis) के रस देनेसे मरा। यह मनुष्य फस्द और छालोंसे मारा गया। यह स्त्री निद्राजनक विषके प्रभावसे यहां आकर सो गई और ये सभी औषध-विज्ञान के शिकार हुए।

भले ही कुछ अपवाद हों, पर श्मशानकी साक्षी यह है — ईश्वरने अपने प्राणियोंको हवा, रोशनी, पानी और खुराक दी थी, पर मनुष्य अपने-आपकोदम घोंटनेवाली एक मांदमें बंदकर लेता है और फिर आश्चर्य करता है कि उसके भाई-बन्धु क्यों मरते हैं।

इस झूठे और घातक औषधिशास्त्रकी दवाओं और उसके चिकित्सा-साधनों को देखिये, जैसे फस्द खोलना, जोंक लगाना, नश्तर लगाना, छाले डालना, जलाना एवं दाहक पदार्थ; मांस-भोजी कृमि, खनिज, वृक्ष, वनस्पति और पशु-जगतसे मिलनेवाली सैकड़ों तरहकी दवाएं, वे सभी जो त्रिलोकमें बरती जाती हैं, औषधिशास्त्रमें शामिल हैं।

क्या प्रकृतिने यही वस्तुएं इलाजके लिए उत्पन्न की हैं ? ऐसा मानना ईश्वरपर लांछन लगाना है।

एक बीमारी अच्छी करनेके बहाने दूसरी पैदा कर देनेकी असली शक्ल क्या है, इसकी एक मिसाल लीजिये।

रौक आइलैंड और आयोवा शहरके बीचमें गाड़ीपर बैठे हुए एक अपाहिज सिपाहीकी ओर मेरा ध्यान गया। उसकेपीले, पतले चेहरे, हल्की खांसी और डगमग चालसे साफ जाहिर था कि वह बढ़ी हुई यक्ष्माका मरीज था। मैं फौजी शिविर और अस्पतालोंमें मियादी बुखारके बारेमें काफी देख-सुन चुका था कि कैसे दवा देकर वहां बीमारी दूर करते हैं या रोगीको मार ही देते हैं। इस सिपाहीकी हालतको तुरन्त समझ गया और अपने साथीसे कहा, "यह बेचारा सिपाही मरनेके लिए ही घर जा रहा है। शायद इसे मियादी बुखार हुआ था, जिसे दवाओंने घातक यक्ष्मा बना दिया है।" मैंने उस मरीजके पास जाकर पूछा—

"तुम्हें मियादी बुखार कितने दिन पहले हुआ ?"

"पहले यह मियादी बुखार न था, बल्कि खसरा था।"

"तुम खसरेसे कितने दिन बीमार रहे ?"

"करीब दस दिन।"

"क्या तुमने खसरेमें कोई दवा खाई ?"

"बहुतेरी।'

"खसरा अच्छा होनेपर फिर तुम्हें क्या हुआ ?"

"मेरे फेफड़ोंसे खून आने लगा।"

"क्या उसके लिए तुमने दवा ली ?"

"काफी।"

"इसके लिए कितने दिन तुम्हारा इलाज हुआ ?"

"करीब एक सप्ताह ।"

"फिर क्या हुआ ?"

"तब मियादी बुखार रहने लगा ।"

"तो तुमने मियादी बुखार हटानेके लिए दवा ली होगी ?"

"करीब दो हफ्तेतक बहुत-सी दवाएं लीं ।"

"फिर क्या हुआ ?"

"मैं चलने-फिरने तो लग गया, पर खांसी शुरू हो गई ।"

"तो शायद अब तुम्हें यक्ष्मा हुआ है ?"

"नहीं, मैं एसा नहीं समझता। पर शायद मैं उस रास्तेपर जा रहा हूं ।"

"क्या शुरूमें हट्टे-कट्टे थे ?"

"हां, बहुत अच्छा था। मैं अपने जीवनमें पहले कभी बीमार नहीं पड़ा था ।"

मेरी आशंका ठीक निकली । फेफड़ोंसे खून जाना, मियादी बुखार, यक्ष्मा साफ-साफ उन दवाओंके असरसे हुए थे, जो खसरेको हटानेके लिए दी गई थीं ।

पिछले हफ्ते न्यूयार्कमें मुझे सेनाके एक अफसरको देखनेके लिए बुलाया गया। उसकी संक्षिप्त दुखद कहानी सुनिये— दो महीने पहले उसे पीलिया (Jaundice) रोग हुआ। दवाओंसे हफ्तेभरमें उसे अच्छा कर दिया गया । तब जिगरकी सूजन शुरू हुई। इसे भी एक हफ्तेमें दवाओंने ठीक कर दिया । अब उसपर मियादी बुखारका हमला हुआ। एक हफ्तेमें उसका भी सफाया हो गया और तब गठिया आई । अब उसका दाहिना हाथ बुरी तरह फूल गया है । उसका बायां घुटना बढ़ गया है और नसें खिच गई हैं । अंगुलियां ऐंठ गई हैं और सारा बदन पंगु—

गतिहीन या पीड़ित — हो गया है। कलही वह न्यूयार्कमें मेरे अस्प-
तालमें गया है, जहां उसके शरीरमेंसे दवाओंका असर हटाकर
उसके अंगोंको सीधा किया जायगा, जिससे वह कब्रकी ओर न
जाकर फिर लड़ाईके मैदानमें अपनी सेवाएं अर्पित करनेके
लायक होगा।

ये सारी उलझनें यानी यकृतका शोथ, मियादी बुखार और
गठिया दवाओंसे उत्पन्न मर्ज थे और गठिया ठीक करनेको दी
गई दवा ही उनकी जड़ थी। (यह रोगी प्राकृतिक चिकित्सासे
शीघ्र ही अच्छा हो गया।) पारसाल मेरे पास एक रोगी आया,
जिसके दोनों हाथोंमें लकवा था। तीन महीने पहले उसे भयंकर
गठिया रोग हुआ था। मैंने इसके बीसियों रोगी ठीक किये हैं
औग कभी दो हफ्तेसे ज्यादाका समय नहीं लगा। पर उसके
चिकित्सकने उसे पारा, सुरमा, तूतिया आदि खिलाये थे।
दवाओंने गठियाको तो आराम पहुंचाया, पर रोगीको तोड़
दिया। चिकित्सक इसके बाद क्या देता! अवश्य ही उसने
विषतुंदुकी (strychnine,) जैसा जहर दिया होगा।

कुछ हफ्ते पहले मैंने क्लीवमें एक रोगी देखा। पारसाल पहले
जब वह भला चंगा था, उसे फेफड़ोंका ज्वर हुआ। उसके
चिकित्सकने उसके ज्वर और जीवनीशक्तिको सुरमेकी जोरदार
खुराकें दे-देकर कम कर दिया और उसकी छाती पर भी वह
बराबर छाले डालता रहा। पर जल्दी ही कैलोमलकी भारी
खुराक खिलानेसे बीमारी फिर लौट आई। कई हफ्ते योंही
घिसटनेके बाद बीमारीने मियादी बुखारका रूप ले लिया,
जिसके लिए और अधिक कैलोमल दिया गया। अब बुखार फिर
लौट आने लगा, जिसमें जोरसे पसीना छूटता। उसे लोहा और

कुनैनकी बड़ी मात्राएं दी गईं। छह महीने दवाओंका जोर चला और तब मालूम हुआ कि जिगर और तिल्ली बढ़ गई है और उनमें माद्देका घना जमाव हो गया है। अब उसे पारा दिया जाने लगा। इसके बाद बीमारी के नये-नये रूपोंकी उलझनें बढ़ती गईं, जिसके लिए दवाओंके नये-नये बखेड़े दो साल तक और चले।

अब रोगीका जिगर बढ़ा हुआ है, जूड़ी होनेसे तिल्ली बढ़ गई है, रीढ़ मुड़कर दोहरी हो गई है, सिर आगेकी तरफ एक ओरको झुक गया है, टांगें बहुत कमजोर हैं, पैर गट्टोंपर पंगु हो गये हैं। घुटने कड़े हो गये हैं, खांसी आती है, छातीमें घाव जान पड़ते हैं, दिल धड़कता है, पैर ठंडे मालूम होते हैं, कमर में ठंडक और ऐंठन होती है। उसका दिमाग और याददाश्त जो पहले बहुत अच्छे थे, अब कमजोर हो गये हैं। आंखें इतनी कमजोर हैं कि उनसे पढ़ा नहीं जाता। उस अभागे की दशा दयनीय, खंडहर जैसी हो गई है।

पर यह सब किसने किया ? दवाओं ने, और किसीने नहीं। उसके सब रोग और उलझनें जिनके लिए डाक्टरोंने इलाज करते-करते उसे करीब-करीब अधमरा कर डाला। मैंने ऐसे हजारों रोगियोंको देखा है और उनकी जांच की है, जिनके बारेमें दावे-से कह सकता हूं कि पहले बीमारीको अच्छा करनेके लिए जो दवाएं दी गईं उन्होंने दूसरे औषध-जन्य रोग पैदा किये। फिर इन बीमारियोंके लिए और दवाएं दी गईं, जिनसे वह बीमारियां—मियादी बुखार, बार-बार बीमारीकी हालत और उलझनें पैदा हुईं और सबने मिलकर उसके अंगोंको कड़ा कर दिया। कमरके बांसको झुका दिया, नस-नाड़ियोंको जीर्ण कर दिया और सारे शरीरको खंडहर बना दिया। अब भी दवा देनेवाले उसके

चिकित्सक, जो उसे कब्रके द्वार तक ले आये हैं और जिन्होंने हमेशाके लिए उसकी जीवनीशक्तिके उत्तम अंशको नष्ट कर डाला है, उन दवाओंके सिवा और कुछ नहीं दे सकते। उसके मित्र, पड़ोसी या माता-पिता भी यह नहीं समझ पाते हैं कि उसका इस हालत में दवाएं खिलानेके सिवा और क्या किया जा सकता है।

इलीनोयमें मैंने हजारों आदमियोंके सामने ऐसे कई मरीजोंको देखा और उन्हें सलाह दी। उनमें एकका नाम गौरसच था, जिसकी उम्र २८ वर्ष की थी। पहले उसका ढांचा मजबूत था। पांच साल हुए उसे जूड़ी आई और उसने भारी मात्रामें कुनैन खाई, जिससे जिगर बढ़ गया, रक्तसंचयके कारण उसने अपना काम करना छोड़ दिया। उसे पारा खिलाया गया। पारेसे उसकी ग्रहणी (duodenitis) पर सूजन आ गई। उसके लिए सुरमा और अफीम दी गई। इनसे सूजन बढ़कर गुर्दों पर आ गई। रुधिरके बहावमें बाधा आई। त्वचाका कार्य मंद हो गया। उसके लिए पारे और मादक द्रव्योंकी और बड़ी मात्रा दी गई। इन दवाओंसे जीवनीशक्ति इतनी क्षीण हुई कि उसके रोगको स्नायु-दौर्बल्य करार दिया गया। तब उसे विष-तुंदुकी Strychnine दिया गया। नाड़ी-दौर्बल्य का काफी इलाज हो चुकनेपर डाक्टरोंने रीढ़की बीमारी तय की और छाले डालना और दागना शुरू किया। आखिरमें वातशूल तय पाया और डाक्टर एक नया विष देने लगा।

रोगीकी हालत, जैसा मैंने दवा-दारूवाले डाक्टरोंके सामने लोगोंको समझाया, यह थी—बढ़ा हुआ जिगर, जूड़ीसे सिकुड़ी हुई तिल्ली, झुकी हुई रीढ़, हांफती हुई सांस, पेटके और पीठकी

मांसपेशियोंपर लकवे जैसा असर, नजला, कंठशोथ, अन्त्रपुच्छ शोथ या पेटमें दर्द, गुर्दोंका ह्रास, पेटमें जलन, लेटनेमें कठिनाई, हाथ-पैरोंमें ठंड और शरीरका बिलकुल टूटा हुआ ढांचा।

डाक्टर चार साल तक अपने इलाजके करिश्मे दिखलाते रहे। अच्छा करनेके बजाय रोगीको मौतके नजदीक पहुंचाते रहे। उसकी सारी बीमारियां प्रारंभिक जूड़ीके सिवा उन दवाओंसे पैदा हुईं, जो सिलसिलेसे रोगोंको दबानेके लिए दी गईं। अगर रोगीको बिना दवाओंके छोड़ दिया जाता और दुनियांमें डाक्टर पैदा न हुए होते तो वह महीनेभर में चंगा हो जाता या किसी होशियार प्राकृतिक चिकित्सकके हवाले कर दिया जाता तो वह हफ्ते भरमें ही अच्छा हो जाता। हर हालतमें दवाओंके पांच सालके खर्च, शारीरिक नाशके इस कष्ट और जन्म भरके लिए टूटे हुए स्वास्थ्यकी भयंकरतासे उसकी रक्षा हो जाती।

एक और मरीजकी मिसाल देना चाहता हूं। पश्चिमी अमरीकामें अपने हालके दौरेमें और भी ऐसे बहुत-से रोगी मैंने देखे। न्यूयार्क हाइजियोथेराप्यूटिक कालेजमें १८५६-५७ में जो छात्र थे, उन्हें याद होगा कि वहां वाल्टर नीटिंग्स नामका एक सुन्दर नौजवान था, जो जीवन, आशा और आनन्दसे भरा हुआ था। वह पिछले दिसम्बरमें मर गया। पर उसकी मृत्यु क्यों हुई ? वाल्टरने अपने भाईकी तरह लड़ाईके शुरूमें ही अपनी सेवाएं देशके लिए अर्पित कर दीं। उसका भाई मिसूरी भी फौजमें भर्ती हुआ और उसे कैन्टकी फौजमें कमीशन मिला। वहां मौसमकी खराबीसे उसे मियादी बुखार आ गया। उसे सब लोग प्यार करते थे, विशेषकर उसके अफसर। उसके रेजिमेंटके सर्जनने, जो दवाओंका डाक्टर था, उसे बचानेके लिए भरसक उपाय किया,

पर इसी बातने उसे मार दिया। वाल्टर नीटिंग्स का वश चलता तो वह दवा नामके जहरकी एक खुराक भी अपने भीतर न जाने देता। सर्जनकी जहरीली दवा गलेके नीचे उतारनेसे पहले वह पसंद करता कि वह दुश्मनकी गोलियां खा ले। जैसा अक्सर इस तरहके मर्जमें होता है, उसे सन्निपात हो गया। उसके मतिष्कमें खून भर गया और उसका कुछ वश न चला। दवाओंके रूपमें घातक विष उसके शरीरमें जाने लगे और उसके प्राण शरीर छोड़कर चले गए। वाल्टर अन्य अधिकांश सिपाहियोंकी तरह दुश्मनोंकी गोलियों और संगीनोंसे नहीं, बल्कि रोग और दवाओंसे मरा।

उसके बापको तार दिया गया और वह तुरंत छावनीकी ओर चल पड़ा। लेकिन उसके पहुंचनेसे पहले ही दवाएं उसके पुत्रका काम तमाम कर चुकी थीं। जिस बातसे वह डरता था वही होकर रही, यानी डाक्टरोंने दवायें दे-देकर उसके पुत्रको मौतके घाट उतार दिया।

मैं नहीं समझता कि न्यूमोनिया और मियादी बुखार, जिनसे हमारे इतने सिपाही मर रहे हैं, कोई भयंकर रोग है। अगर मरीजोंको डाक्टरी इलाजसे बचाया जा सके तो इन रोगोंमें मृत्यु बहुत कम हो जाय। पन्द्रह वर्षोंमें मेरा एक भी मरीज नहीं छीजा और मैंने सैकड़ोंका इलाज किया है। इन रोगोंमें मृत्युका कारण दवाएं ही हैं।

क्या आप जानते हैं कि बुखार जैसी बीमारीके एक मामूली दौरेमें आप कितनी दवाएं या विष अपने शरीरमें भर लेते हैं? इनमें कई बार तो दो-दो तीन-तीन तरहकी दवाएं दी जाती हैं। हर नुस्खेमें कई-कई दवाएं होती हैं। सब मिलाकर हर रोज

औसतन एक दर्जन दवाएं आप खा लेते हैं। फिर दूसरे दिन कम-बेश इन्हें बदल दिया जाता है। इस तरह महीने भर में पचाससे लेकर सौ तरहके जहर आपके जीवित शरीरमें पहुंच जाते हैं।

इसमें कोई आश्चर्य नहीं कि आजकल रोगोंमें तरह-तरहकी उलझनें, उनका बार-बार होना या शक्ति का ह्रास या रोगका मियादी बुखारकी शक्लमें बदल जाना आदि बातें पाई जाती हैं। इसमें ताज्जुब क्या है कि नई-नई बीमारियां रोगीको घेरे रहती हैं, और भूत-प्रेतोंकी तरह वायुमंडलमें छाई रहती हैं, ताकि जहां दवाओंने रोगीको कमजोर किया कि वहां वे उसे पकड़ लें या हमला करके उसके भीतर घुस जायं। प्राकृतिक चिकित्सामें इस तरहकी बातें बिलकुल नहीं देखी जातीं। मैंने पहले सिनेटर डगलसका नाम लिया है। उसे सख्त गठिया थी। प्राकृतिक चिकित्सासे वह उस बीमारीसे हफ्ते दो हफ्तेमें अवश्य मुक्त हो जाता, और चाहे जो हो, मृत्युके मुंहमें तो हर्गिज न पड़ता। उसनेजो कठिन श्रम किया था और शरीर-विज्ञान के विरुद्ध जो कुछ आदतें ड़ाली थीं, उनसे उसके जिगर और जोड़ोंमें अवरोध आ गया और प्रकृतिने कोशिश की कि माद्देको शरीरसे बाहर निकालकर उसे इस बीमारीसे छुड़ाये, पर बीमारीमें जो दवा दी गई उससे गठिया तो गई, पर रोगीको भी लेती गई।

पारसेलसस पन्द्रहवीं सदीका एक बड़ा बदमाश अताई (कठमुल्ला) हुआ है। वही कैलोमल, सुरमा, अफीम आदि दवाएं इस्तेमाल करनेका अगुआ था। उसके हाथसे एक मुद्रकका गठिया अच्छी होनेके कारण उसका बड़ा नाम हुआ पर रोगी कुछ ही दिनों बाद मस्तिष्कके विकारसे मर गया। किसीको यह शुबहा तक न हुआ कि जिस दवाने गठिया अच्छी की थी, उसीने

मस्तिष्कका विकार पैदा किया।

दो साल पहले न्यूयार्कमें कमोडर पेरीकी अचानक मृत्यु हुई। तूतियेसे उसकी गठिया तो गई, पर रोगी भी चला गया।

यह कैसा आश्चर्य है कि जैसे ही डाक्टरने गठियाको दबाया, मियादी बुखार आ गया और रोगीके लिए घातक बन गया। प्रश्न है कि जब गठियाका इलाज हो रहा था तब मियादी बुखार कहां था? सिनेटर डगलसमें जब वह प्रकट हुआ, उससे पहले उसका अस्तित्व किस रूपमें था? वह कहांसे आया और कहां गया? उसकी असलियत क्या थी? मेरा जवाब है कि इलाजसे मरीजमें जो कमजोरी आई, वही बुखार बन गया। बुखार या सूजनकी हालतमें किसी भी रोगीका गलत इलाज कीजिये या फस्द खोलकर, छाले डालकर अथवा दवा देकर उसे कमजोर करते जाइये तो मियादी बुखार जरूर प्रकट हो जायगा।

मैंने कहा, राजकुमार एलबर्ट दवाएं लेनेके विरुद्ध थे। उनकी पत्नी महारानी विक्टोरियाका भी यही हाल था। इसमें आश्चर्य नहीं, अंग्रेज लेखक और अध्यापकोंने बारम्बार दवाओंकी निन्दा की है, उनकी दलीलोंके कुछ नमूने मैं देना चाहता हूं।

—डाक्टर ईवान्स, फेलो आव दी रायल कालेज, लन्दन: "हमारे समयमें इलाजका जो तरीका चालू है वह अनिश्चित और असन्तोषप्रद है। यह न किसी सिद्धान्त पर आश्रित है, न समझदारी पर, जिसपर विश्वास किया जा सके।"

—जान आवरनेथी, एम० डी०, 'दी गुड', लन्दन: "कुछ दिनोंसे डाक्टरोंकी संख्यामें बहुत वृद्धि हुई है, पर उसी तादादमें रोग भी बढ़े हैं।"

'थियोरी एंड प्रैक्टिस आव फिजिक्स' के लेखक, एडिनबरा-

के प्रो० शिगोरी : "सज्जनो, इलाजकी बातोंमें सौमें निन्नानवे झूठी हैं और डाक्टरी सिद्धान्त प्रायः मूर्खतापूर्ण है।"

—डा० रैंकेल, फेलो आव दि रायल कालेज लंदन : "इससे इन्कार नहीं किया जा सकता कि इलाज का चालू तरीका इस पेशेके लिए बहुत शर्मकी बात है। इसमें अन्ड-बन्ड और बेसिरपैर की बातोंको इलाजका नाम दिया गया है। दवाओंसे बहुत कम फायदा होता है। वे रोगोंको बहुत ज्यादा बिगाड़ देती हैं। मैं निर्भयतापूर्वक कह सकता हूं कि अधिक रोगी डाक्टरके अभावमें बेहतर रहते हैं। अपनी पेशेवर बिरादरीके कुकृत्योंको जानकर ही मैं इस तरहकी भाषाका प्रयोग कर रहा हूं।"

—प्रो० जेमिसन एडिनबरा : "इलाजका मौजूदा तरीका विज्ञानके नामपर कलंक है और इलाज करनेवाले बीमारीकी असलियत और उसके सही इलाजके बारेमें प्रायः कुछ नहीं जानते। दसमें नौ दवाएं रोगीको सरासर नुकसान पहुंचाती हैं। उनकी बीमारीकी असलियतके बारेमें हमारी गुमराही सजाके काबिल है।"

—डबलिन मेडिकल जर्नल : "दरअसल इलाजका वह अनिश्चित और बिलकुल असंतोषप्रद तरीका, जिसे डाक्टरी विज्ञान कहते हैं, विज्ञान है ही नहीं, बल्कि असंगत विश्वासोंकी खिचड़ी है और जल्दीमें बनाई हुई गलत धारणाओंपर आश्रित है। उसके तथ्य गड़बड़ हैं और ठीक तरह से समझे नहीं गये। उसके दृष्टांत ऐसे हैं, जिनकी मिसाल नहीं। उसकी मान्यताएं बिना तर्क की हैं और सिद्धान्त न सिर्फ बेकार, बल्कि खतरनाक हैं।"

—सर जॉन फोर्ड, एम० डी० एफ. आर. एस. : "कुछ रोगी दवाओंसे अच्छे होते हैं, अधिक बिना दवाओंके और उनसे भी

अधिक दवाओंके बावजूद अच्छे होते हैं।"

—डा० फ्रेंक, प्रसिद्ध लेखक और चिकित्सक : "प्रतिवर्ष हजारों आदमियोंका कत्ल रोगी-गृहोंके शांत कमरोंमें हो जाता है। सरकारको चाहिए कि या तो इलाज करनेवाले डाक्टरोंको देश-निकाला दे दे, या फिर लोगोंके जीवन की रक्षाके लिए आजकी बनिस्बत ज्यादा अच्छे तरीके काम-में लाये जायं। सरकार नीची सीढ़ीके व्यवसायोंपर जितना ध्यान देती है, उससे बहुत कम इलाजके खतरनाक पेशे और इसमें होनेवाली प्राण-हत्या पर देती है।"

—हिस्ट्री आव मेडिसिन के लेखक डा० बोस्टक : "रोगके बारेमें हमारी जानकारी और ज्ञान उस हिसाबसे नहीं बढ़ता जैसाकि इलाजमें हम आगे बढ़ रहे हैं। दवाकी खुराककी हरेक मात्रा रोगीकी जीवनी-शक्तिपर एक अंधा प्रयोग है।"

—जॉन मेसन गुड, एम० डी०, एफ. आर. एस. 'बुक आफ नेचर' 'ए सिस्टम आफ नोजोलौजी' 'स्टडी आव मेडिसन' के लेखक : "चिकित्सा-विज्ञान बेकार की बकवास है। मनुष्य-शरीरपर दवाओंका प्रभाव अनिश्चित है। लड़ाई, महामारी और दुष्काल इन तीनोंकी अपेक्षा दवाओंसे मरनेवालों की संख्या अधिक है।"

—जे० एस० जॉनसन, एम० डी०, एफ. आर. एस. : "मैं अपने सच्चे विश्वासके बलपर, जो लंबे अनुभव और विचारके बाद बना है; यह कहनेका दावा करता हूं कि अगर एक भी चिकित्सक, चीरफाड़का डाक्टर, रासायनिक अत्तार या दवा धरती पर न होती तो अबकी बनिस्बत बीमारी और मौत भी

कम होती।"

यह कम मुमकिन है कि राजकुमार एलबर्ट और महारानी-को इन प्रसिद्ध चिकित्सकोंकी सम्मतियोंका पता न हो। राज-कुमार एलबर्ट तो इलाज और शरीरविज्ञानके अध्ययनमें भी रुचि रखते थे। लंदनके गरीब लोगोंकी गंदगी दूर करनेमें उन्होंने जितनी सेवा की थी, उतनी शायद अंग्रेजी साम्राज्यके सब डाक्टरोंने मिलकर भी न की होगी। राजकुमार एलबर्ट इलाज करनेवाले डाक्टरोंकी दवा नहीं खाना चाहते थे, फिर भी संयोग कि उसीसे उनकी मृत्यु हुई। लार्ड बायरन दवासे घृणा करते थे और फस्द खोलनेके निंदक थे, लेकिन फस्द खोलनेसे ही वह मरे। राजकुमर एलबर्ट मामूली दवाएं तो न खाते थे, लेकिन मादक, उत्तेजक पदार्थोंका सेवन उन्होंने स्वीकार किया। बस, यही उनकी घातक भूल हुई।

राजकुमार एलबर्टने अलकोहलको दवा नहीं माना ! और मानते भी कैसे, जबकि सभी विद्वान, रसायनशास्त्री कहते हैं कि अलकोहल तो प्राणदायक खुराक है। क्या बड़े-बड़े शरीर-विज्ञानी अलकोहलको जीवनी-शक्ति-संवर्द्धक नहीं कहते ? क्या सब जगहके चिकित्सक कमजोरी और थकानमें उसका इस्तेमाल नहीं कराते ? राजकुमार भी इससे अधिक ऊंचे कैसे उठ सकते थे ? जब सारे सभ्य संसारके प्रामाणिक विद्वान शराबको पोषक और जीवनी-शक्ति देनेवाला घोषित करते हैं तो राजकुमार उसे लेनेसे कैसे इन्कार करते ?

शायद राजकुमार एलबर्टने यह बात नहीं पढ़ी थी कि प्रसिद्ध लेखक परेराने अपने ग्रन्थ 'फूड एंड डायट' में शराबको घातक खुराक कहा है। अपने औषधशास्त्र संबंधी ग्रन्थमें घोषित

किया है कि यह काट करनेवाला विष है। उसने अनेक प्रयोगों द्वारा सिद्ध किया है कि यह सब सजीव वस्तुओंका घातक है।

अंग्रेजी अखबारोंमें यह बात आई है कि राजकुमार एलबर्ट पांच-छः दिनोंतक उत्तेजक खुराकपर रखे गये। किसीको इसमें जोखिमका डर न था। चिकित्सक उनके रोगको भारी नहीं समझते थे। अचानक रोगीकी शक्ति क्षीण हो गई। मियादी बुखार शुरू हो गया। उनके शरीरने और किसी तरहकी उत्तेजनाकी प्रक्रियासे इन्कार कर दिया। शरीर इस प्रकार यकायक ठप्प क्यों हो गया ? वजह यह थी उनकी जीवनी-शक्ति पहले ही निचुड़ चुकी थी। उनके शरीरको आराम चाहिए था, पर उसे शराबके विषसे बुखारकी-सी हालतमें और लगातार घबराहटमें रखा गया।

यह भयंकर मियादी बुखार भी क्या है ? दवाके कारण रोगी मौतके पास पहुंच जाता है तो यह आ धमकता है।

राजकुमार एलबर्टकी मृत्यु इतनी रहस्यभरी हुई थी कि लोगोंको शक हुआ कि कहीं राजतैनिक कारणोंसे तो उनका अन्त नहीं कर दिया गया। पर मेरी राय है कि इलाज ही उन्हें मारनेके लिए काफी था।

पुर्तगालके राजा और उनके भाई इसी तरह अचानक और रहस्यपूर्ण ढंगसे मृत्युको प्राप्त हुए और उनके बारेमें भी जानबूझ-कर विष देनेकी आशंका हुई थी।

मुझे याद आता है कि प्रेसिडेंट टायलरकी मृत्युके बाद समाचार-पत्रोंने उसके कारणोंकी चर्चा करते हुए रोगकी अपेक्षा राजनीति को अधिक महत्व दिया था। चिकित्सकोंका कहना था कि उनकी मृत्यु उस रोग से हुई जो झरबेरीके साथ दूध

पीनेसे दो-एक दिन पहले उनके पेटमें हो गया था।

झरबेरीके फल और दूधसे तो दूध-पीते बच्चेको भी खास हानिकी आशंका नहीं है। ऐसे धाकड़ व्यक्ति की तो बातही क्या, जिसका शरीर गोलियोंसे भी लगभग सुरक्षित था। मुझे तो उनकी मौत पारेकी नीली गोली, भूरे चूरन, हरे टिंचर और लाल मिक्सचरकी बदौलत हुई जान पड़ती है।

चिकित्सकोंकी रिपोर्टमें कहा गया है कि प्रेसिडेंट हेरिसन जिगरके काम न करने और पेटकी आंतोंके बिगड़नेसे बीमार हुए। रोगीका इलाज हुआ और जोकें लगाईं गईं, मियादी बुखार आ धमका और उसने उन्हें मृत्युके मुंहमें पहुंचा दिया। उनकी मृत्युके बाद अखबारोंमें लिखा गया कि खून निकालना ठीक नहीं था। किसीने कहा कि ज्यादा खून निकाल दिया गया। कुछका कहना था कि और ज्यादा खून निकालना चाहिए था।

वाशिंगटनकी मौत भी अचानक और अजीब ढंगसे हुई। एडिनबराके प्रो० रीडने घोषणा क़ी कि उन्हें तीन तरहसे मारा गया अर्थात् फस्द खोली गई, जो अकेले ही मौत ला सकती थी। उन्हें इतना कैलोमल तथा सुरमेकी दवा खिलाई गई कि बिना किसी और दवाके भी वह सीधे मौतके मुंहमें चले जाते।

प्रेसिडेंट, राजकुमार, काउंट, सिनेटर, राजा-महाराजाओंसे, जो दीर्घजीवी होना चाहते हैं, मेरी ससम्मान प्रार्थना है कि वे फ्रांसके सम्राट्का उदाहरण अपने सामने रखें तो वे वर्तमान मनुष्यजातिका अधिक उपकार कर सकेंगे। लुई नैपोलियन रोगी होनेपर दवा नहीं लेते थे। उनके शत्रुओंको यह आशा छोड़ देनी चाहिए कि बीमारीसे कभी उनकी मृत्यु होगी। कुछ साल पहले जब यह एलबूमेनेरिया नामक भयंकर और प्राण-

घातक रोगसे पीड़ित हुए तो वह स्नान-चिकित्साके केन्द्रमें चले गए और अच्छे हो गए। 'न्यूयार्क वर्ल्ड' नामक समाचार-पत्रके पेरिस-स्थित संवाददाताका कहना है कि उन्होंने कई वर्ष तक जल-चिकित्सा की। वह अपने लिए दो जगह जल-चिकित्साका पूरा सामान तैयार रखते हैं—एक महलमें, दूसरा जहां जाते।

: २० :

शराबका कुप्रभाव

माफ करेंगे, मैंने आपको ज्यादा देर रोका है, फिर भी शराबकेबारेमें एक औरउदाहरण दिये बिना मैं नहींरुक सकता। एक बार एक पूरी सेनामें भगदड़ मच गई—यद्यपि पीछा करने-वाला कोई शत्रु न था, बल्कि शत्रुसेना भी उलटी ओर भाग रही थी। दोनों फौजोंमेंसे हरेकको यही भ्रम हुआ कि उसकी खूब मरम्मत हुई है और उसके सब आदमी काट डाले गये। इसके कई कारण कहे गए हैं, पर उनमें एक भी जमा नहीं।

फौजोंमें पहले भी भगदड़ हुई है, पर इस तरहकी नहीं। दोनों सेनाएं एक-दूसरेसे दूर भाग रही थीं और चौबीस घंटे तक तोपखाना और हथियार उसी तरह पड़े रहे, दोनोंमेंसे एकने भी उनकी ओर नहीं देखा।

इस बारेमें मेरी राय यह है कि शराबके कारण यह भगदड़ मची। इस बातका सबूत है कि उस दिन और उस अवसर पर, कुछ अफसर तो नशेमें जरूर थे। कौन नहीं जानता कि रोजमर्रा शराबके व्यसनी खास मौकोंपर और गहरी चढ़ा लेते हैं। न्यूयार्क रेजिमेंटके डा० फ्रैंक हैमिल्टनने 'न्यूयार्क मेडिकल टाइम्स' में बयान दिया है कि घायलोंको वह बरांडी बंटवाता और मोर्चे पर लड़नेवाले सिपाहियोंमें तो छुट्टा उसका इस्तेमाल कराता, जिससे उनका साहस बना रहे।

हरकोई यह समझ सकता है कि जब दिमागमें इस

तरहकी खलबली हो, जैसी मारा-मारीकी लड़ाईमें होती है, जब लोग हिंसासे पागलसे हो उठते हैं, जब कभी डर और कभी आशासे दिमाग विचलित हो जाता है, और जब विरक्त भावोंसे आदमी बौखला जाता है तब घबराहटके कारणोंमें थोड़ी-सी वृद्धि भी दिमागके संतुलनको बिलकुल खो देती है। मादक शराबकी बढ़ी हुई खुराकसे उस हालतमें अफसर और सिपाही दोनोंकी आंखोंमें चर्बी छा जाना संभव है। वे वस्तुएं दोहरी देखने लगते हैं। वे दोस्तको दुश्मन समझकर गलत ओर मार कर सकते हैं, जैसा कि कई बार हुआ है। वे सोच सकते हैं कि शत्रु-सेनामें तीस हजारकी नई कुमक पहुंच गई है, जबकि दरअसल वहां थोड़ी-सी धूल उठनेके सिवा और कुछ न था। एक टूटी फौजी टुकड़ीको वे विद्रोहीकी पूरी पल्टल समझ सकते हैं या दूर लगे हुए पेड़ोंको बढ़ती हुई सेना मान ले सकते हैं। अपनी उस भगदड़में वे दूरतक भाग जा सकते हैं जबतक कि शराबका धुआं उनके दिमागसे दूर न हो और वे मुड़कर देखें कि उनके दुश्मनकी सेना भी दूसरी ओर भाग रही थी। मेरे ख्यालसे यह भारी गलती है कि सामने लड़नेवाले बहादुर सिपाहियोंकी रक्षा पीछेसे उनपर पड़नेवाली शराबकी मारसे न की जाय।

: २१ :

उपसंहार

आपको ज्यादा देर तक रोकनेपर भी मैं बहुत-सी महत्वपूर्ण समस्याओंका सिर्फ संकेत कर पाया हूं, जिनकी व्याख्याके लिए मुझे समय और अवसर चाहिए। इस विषयकी अनेक समस्याओंपर मैं साल भर तक दो घंटे रोज बोल सकता हूं, फिर भी विषय का अन्त न होगा। यदि आपकी इस विषयमें सच्ची रुचि है तो मैंने काफी कह दिया है, और रुचि नहीं है तो मैं अधिक कह गया हूं।

मैंने जनताके सामने घोषणा की है कि प्राकृतिक चिकित्साके जिस तरीकेको मैं जानता हूं, उससे मियादी बुखार और दूसरी बीमारियोंका, यदि फौजमें इलाज किया जाय तो हजारों आदमी और लाखों रुपयों की बचत होगी। क्या अधिकारी इस विषयकी सारी बातें जानते हैं ? क्या वे इलाजके बारेमें जानकारी चाहते हैं ? आज रात तो मैंने सिर्फ सिद्धांतोंकी चर्चा की है और कुछ ऐसी बातें कहीं हैं, जिनसे आपको इस विषयमें आगे जांच-पड़ताल करनेकी प्रेरणा मिले। अगर मेरा कहना सही है तो लोगोंके लिए इस विषयका ज्ञान जरूरी है, अगर मैं गलती पर हूं तो किसीको मेरा भंडाफोड़ करना चाहिए। मेरी प्रार्थना है कि डाक्टर—चिकित्सा-विज्ञानके शिक्षक— बतायें कि मैं कहां गलती पर हूं। मेरी उनसे प्रार्थना है कि जन-स्वास्थ्यके रक्षककी हैसियत-से और कष्ट पाते हुए मानव-समाजके हितकी दृष्टिसे वे मेरे इन

सिद्धान्तोंको अपनायें या इनका खंडन करें। ये सिद्धान्त जनतामें फैलने चाहिए। मेरे स्कूलसे हर साल बहुत-से लोग निकलकर स्वास्थ्यके मिशनरीकी तरह व्याख्यान और उपचार द्वारा इन सिद्धान्तोंको लोगोंमें फैला रहे हैं। यदि उनकी शिक्षामें सत्य है तो वैज्ञानिक एवं प्रभावशाली अधिकारियोंका कर्त्तव्य है कि जो गलती पर हैं, उनका पर्दाफाश होना चाहिए।

कहा जा सकता है कि तीन हजार वर्षों के संचित ज्ञानके विरुद्ध अपनी कमजोर आवाज उठाना और रायजनी करना मेरी ढिठाई है। कोई हर्ज नहीं, यदि मेरी बात सही है तब तो इसमें हर्ज क्या है और गलत हो तो डाक्टरों के पास इतनी योग्यता और रुचि अवश्य है कि मेरी पोल बता दें, क्योंकि यह लोगोंकी जिन्दगी और मौतका सवाल है। मेरा तो दावा है कि दवा-दारूसे इलाज करानेवाले लोगोंके माने हुए सिद्धान्तोंका मैं खंडन कर सकता हूं। बिना किसी हिचकिचाहटके मैं यह दावा पेश करता हूं कि चिकित्सा-विज्ञानके सच्चे आधारको मैंने पा लिया है और नीरोग होनेके ठीक-ठीक सिद्धान्तोंको मैं समझ गया हूं। उन्हें मैं किसी बहस-मुबाहसेमें समझाने तथा उनका समर्थन करनेको तैयार हूं।

मेरा यह दावा नहीं है कि मुझमें कोई विशेष गुण या बुद्धि है। मैं दवा देकर चिकित्सा करनेवालोंकी भी निन्दा नहीं करता, क्योंकि वे लाचार हैं। वे अपने मतानुसार बरतते हैं, जैसा कि मैं अपने सिद्धान्तके अनुसार चलता हूं। कभी मैं भी दवाओंमें ईमानदारीसे विश्वास करता था और सच्चाईके साथ उन्हें काममें लाता था। यह इत्तिफाककी बात है कि मैंने चिकित्सा-विज्ञानकी छानबीन प्रकृतिके नियमोंके साथ की, जैसी मुझसे पहले किसी दूसरे

चिकित्सकने नहीं की थी। बहुतोंने चिकित्सा-शास्त्रका इतिहास लिखा है, सैंकड़ोंने उसकी मान्यताओंका अनुसंधान किया है, हजारोंने उसकी समस्याओंपर विचार किया है और कुछने उसके तत्त्वका भी अध्ययन किया है। लेकिन मुझसे पहले कभी किसीने उसके मूलभूत आधारोंकी परख नहीं की थी। सब अपनेसे पहले लोगों की रूढ़ियोंको मानकर चले थे, जिन रूढ़ियोंका जन्म मध्यकालीन वहम और अज्ञान से हुआ था और जिन्हें जांच-पड़तालके बिना आज स्वयंसिद्ध सत्य माना जा रहा है, लेकिन प्रकृतिके अचूक नियमोंके प्रकाशमें उनकी जांच करनेपर अब वे स्पष्ट रूपसे भ्रान्त जान पड़ते हैं।

अन्तमें मुझे एक बात कहनी है। इतिहास साक्षी है कि जहाँ दवाओंसे इलाजका तरीका जारी है, उसके रास्तेमें नाश लिखा है, वहां मानवी-स्वास्थ्यका ह्रास होता है, जीवनी-शक्ति घट जाती है, रोग बढ़ते जाते हैं एवं अधिक पेचीदा और घातक बन जाते हैं तथा मानव-जाति क्षीण हो जाती है। दूसरी ओर, जहां प्राकृतिक चिकित्साके तरीकेको अपनाया जाता है वहां बिना किसी अपवादके लोगों में नई जान आती है, उसकी उन्नति होती है और जनता जीवनके सभी क्षेत्रोंमें अधिक अच्छी बन जाती है।

मैं इस अवसरका सम्मान करता हूं, जो मुझे इस स्थानमें आकर भाषण देनेसे प्राप्त हुआ है, क्योंकि मेरे लक्ष्यके लिए यह कल्याणकारी है और मानव-जातिके हितके लिए अत्यन्त महत्वपूर्ण।

'मंडल' का

स्वास्थ्य और चिकित्सा-साहित्य

१. कब्ज : कारण और निवारण
२. प्राकृतिक चिकित्सा क्या व कैसे ?
३. मैं तन्दुरुस्त हूं या बीमार ?
४. सरल योगासन
५. आकृति से रोग की पहचान
६. तन्दुरुस्ती हजार नियामत
७. तन्दुरुस्त रहने के उपाय
८. चंगा करे खुदाई
९. वैज्ञानिक मालिश
१०. निरोग होने का सच्चा उपाय